परमगुरु ओशो के आशीष वचनों से शुभारंभ

ध्यान करना चाहते हो?

क्या तुम ध्यान करना चाहते हो? तो ध्यान रखना कि ध्यान में न तो तुम्हारे सामने कुछ हो, न पीछे कुछ हो। अतीत को मिट जाने दो और भविष्य को भी। स्मृति और कल्पना दोनों को शून्य होने दो। फिर न तो समय होगा और न ही आकाश। उस क्षण जब कुछ भी नहीं होता है– तभी जानना कि तुम ध्यान में हो।

ध्यान कैसे करो?

ध्यान के लिए पूछते हो कि कैसे करें? कुछ भी न करो। बस, शांति से श्वास–प्रश्वास के प्रति जागो। होशपूर्वक श्वास–पथ को देखो। श्वास के आने–जाने के साक्षी रहो। यह कोई श्रमपूर्ण चेष्टा न हो, वरन शांत और शिथिल विश्रामपूर्ण बोधमात्र हो। फिर तुम्हारे अनजाने ही, सहज और स्वाभाविक रूप से एक अत्यंत प्रसादपूर्ण स्थिति में तुम्हारा प्रवेश होगा। इसका भी पता नहीं चलेगा कि तुम कब प्रविष्ट हो गए। अचानक ही तुम अनुभव करोगे कि तुम वहां हो, जहां कभी नहीं थे।

मौन कैसे हों?

पूछते हो, मौन कैसे हों? ...बस, हो जाओ। यह कोई बहुत विधि और व्यवस्था की बात नहीं है। चारों ओर जो हो रहा है, उसे सजग होकर देखो। और जो सुनाई पड़ रहा है, उसे साक्षीभाव से सुनो। संवेदनाओं के प्रति होश तो पूरा हो, पर प्रतिक्रिया न हो। प्रतिक्रिया शून्य सजगता से मौन सहज ही घटित होता है।

विचारों से कैसे मुक्त हों?

विचारों से मुक्ति का क्या उपाय है? साधारणतः जब तक मनुष्य प्रत्येक विचार की गति के साथ गतिमय होता रहता है, तब तक उसे विचारों से पैदा हो रही अशांति का अनुभव ही नहीं होता है। लेकिन जब वह रुककर–ठहरकर विचारों को देखता है, तभी उसे उनकी सतत दौड़ और अशांति का प्रत्यक्ष बोध होता है।

विचारों से मुक्ति की दिशा में यह आवश्यक अनुभूति है। हम खड़े होकर देखें तभी विचारों की व्यर्थ भागदौड़ का पता चल सकता है। निश्चय ही, जो उनके साथ ही दौड़ता रहता है, वह इसे कैसे जान सकता है!

विचारों की प्रक्रिया के प्रति एक निर्वैयक्तिक भाव को अपनाएं– मात्र एक दर्शक का भाव। जैसे देखने–मात्र से ज्यादा आपका उनसे और कोई संबंध नहीं। और जब विचारों के बादल मन के आकाश को घेरें, और गति करें, तो उनसे पूछें– विचारो! तुम किसके

हो? क्या तुम मेरे हो?' और आपको स्पष्ट उत्तर मिलेगा– 'नहीं, तुम्हारे नहीं।'

निश्चय ही यह उत्तर मिलेगा, क्योंकि विचार आपके नहीं हैं। वे आपके अतिथि हैं। आपको सराय बनाया हुआ है। उन्हें अपना मानना भूल है। और वही भूल उनसे मुक्त नहीं होने देती है। उन्हें अपना मानने से जो तादात्म्य पैदा होता है, वह हमें उन विचारों से मुक्त नहीं होने देता। ऐसे, जो मात्र अतिथि हैं, वे ही स्थायी निवासी बन जाते हैं।

विचारों को निर्वैयक्तिक भाव से देखने से क्रमशः उनसे संबंध टूटता है। जब कोई वासना उठे या विचार उठे, तब ध्यान दें कि यह वासना उठ रही है– या कि विचार उठ रहा है। फिर देखें और जानें कि अब विलीन हो रहा है– अब विलीन हो चुका है। अब दूसरा विचार उठ रहा है....विलीन हो गया है।

और इस भांति शांति से, अनुद्विग्न भाव से, दर्शक की भांति साक्षी बनकर विचारों की सतत धारा का निरीक्षण करें। इस भांति शांत व चुनावरहित निरीक्षण से विचारों की गति अपनेआप क्षीण होती जाती है, और अंततः निर्विचार–समाधि उपलब्ध होती है।

निर्विचार–समाधि में विचार तो विलीन हो जाते हैं और विचारशक्ति का उद्भव होता है। उस विचारशक्ति को ही मैं प्रज्ञा कहता हूं।

विचारशक्ति के जागरण के लिए विचारों से मुक्त होना अत्यंत आवश्यक है।

ध्यान किसे कहते हैं?

ध्यान किसे कहते हैं, और उसे करने की क्या विधि है?

निर्विचार–चेतना ध्यान है। और निर्विचारणा के लिए विचारों के प्रति जागना ही विधि है।

विचारों का सतत प्रवाह है– मन। इसी प्रवाह के प्रति मूर्च्छित होना– सोए होना– अजाग्रत होना, साधारणतः हमारी स्थिति है।

इस मूर्च्छा से ही पैदा होता है तादात्म्य। मैं मन ही मालूम होने लगता हूं। जागें और विचारों को देखें।

जैसे कोई राह चलते लोगों को किनारे खड़े होकर देखे। बस, इसे जागकर देखने से क्रांति घटित होती है। विचारों से स्वयं का तादात्म्य टूटता है। इस तादात्म्य–भंग के अंतिम छोर पर ही निर्विचार–चेतना का जन्म होता है। ऐसे ही, जैसे आकाश में बादल हट जाएं, तो आकाश दिखाई पड़ता है। विचारों से रिक्त चित्ताकाश ही स्वयं की मौलिक स्थिति है। वही समाधि है।

ध्यान है विधि। समाधि है उपलब्धि।

लेकिन, ध्यान के संबंध में सोचें मत। ध्यान के संबंध में विचारना भी विचार ही है। उसमें तो उतरें। ...डूबें। ध्यान को सोचें मत– ...चखें।

मन का काम है सोना और सोचना। जागने में उसकी मृत्यु है। और ध्यान है जागना। इसीलिए मन कहता है– चलो, ध्यान के संबंध में ही सोचें। यह उसकी आत्मरक्षा का अंतिम उपाय है।

इससे सावधान होना! सोचने की जगह, देखने पर बल देना। विचार नहीं, दर्शन– बस, यही मूलभूत सूत्र है। दर्शन बढ़ता है, तो विचार क्षीण होते हैं। साक्षी जागता है, तो स्वप्न विलीन होता है।

ध्यान आता है, तो मन जाता है। मन है द्वार, संसार का। ध्यान है द्वार, मोक्ष का। मन से जिसे पाया है, ध्यान में वह खो जाता है। मन से जिसे खोया है, ध्यान में वह मिल जाता है।

साक्षीभाव कैसे साधें?

साक्षीभाव की साधना के लिए इन तीन सूत्रों पर ध्यान दो–

1. संसार के कार्य में लगे हुए श्वास के आवागमन के प्रति जागे हुए रहो। शीघ्र ही साक्षी का जन्म हो जाता है।

2. भोजन करते समय स्वाद के प्रति होश रखो। शीघ्र ही साक्षी का आविर्भाव होता है।

3. निद्रा के पूर्व जब कि नींद आ नहीं गयी है और जागरण जा रहा है– सँभलो और देखो। शीघ्र ही साक्षी पा लिया जाता है।

क्या ध्यान सरल है?

कुछ चीजें हैं, जो प्रयास से नहीं आतीं। जैसे आपकी जानकारी में एक चीज है नींद। नींद प्रयास से नहीं आती। अगर आप कोशिश करें नींद लाने की, तो आपकी कोशिश ही नींद नहीं आने देगी। करें, कोशिश करके देखें। किसी दिन नींद लाने की कोशिश करके देखें। करवट बदलें, जंत्र–मंत्र पढ़ें, कुछ और करें, कुछ देवी–देवताओं का स्मरण करें, और नींद लाने की कोशिश करें। उठें, बैठें, दौड़ें, नींद लाने की कोशिश करें। आप जितनी कोशिश करेंगे, नींद उतनी दूर हो जाएगी।

जिसको नींद नहीं आती है, उससे आप कहिए कि हम तो तकिए पर सिर रखते हैं और सो जाते हैं। तो वह कहेगा, आप क्या झूठी बातें कर रहे हैं, जरूर कोई तरकीब होगी आपके पास, बताते नहीं हैं। क्योंकि मैं तो तकिए पर बहुत सिर रखता हूं, लेकिन नहीं सो पाता।

ध्यान भी इतनी ही सरल बात है, इतनी ही सरल। लेकिन प्रयास करेंगे, तो बाधा पड़ जाएगी।

जागरूकता की साधना है ध्यान–

ध्यान का अर्थ है होश। तुम जो कुछ भी होशपूर्वक करते हो, वह ध्यान है।

कर्म क्या है, यह प्रश्न नहीं, किंतु गुणवत्ता जो तुम कर्म में ले आते हो, उसकी बात है। चलना ध्यान हो सकता है, यदि तुम होशपूर्वक चलो। बैठना ध्यान हो सकता है, यदि तुम होशपूर्वक बैठ सको। पक्षियों की चहचहाहट को सुनना ध्यान हो सकता है, यदि तुम होशपूर्वक सुन सको। या केवल अपने भीतर मन की आवाजों को सुनना ध्यान बन सकता है, यदि तुम जाग्रत और साक्षी रह सको।

सारी बात यह है कि तुम सोए–सोए मत रहो। फिर जो भी होगा, ध्यान होगा।

होश का पहला चरण–

होश के लिए पहला चरण है अपने शरीर के प्रति पूर्ण होश रखना। धीरे–धीरे व्यक्ति प्रत्येक भाव–भंगिमा के प्रति, हर गति के प्रति होशपूर्ण हो जाता है। और जैसे ही तुम होशपूर्ण होने लगते हो, एक चमत्कार घटित होने लगता है; अनेक बातें जो तुम पहले करते थे, सहज ही गिर जाती हैं। तुम्हारा शरीर ज्यादा विश्रामपूर्ण, ज्यादा लयबद्ध हो जाता है। शरीर तक में एक गहन शांति फैल जाती है, एक सूक्ष्म संगीत फैल जाता है शरीर में।

होश का दूसरा चरण–

फिर अपने विचारों के प्रति होशपूर्ण होना शुरू करो। जैसे शरीर के प्रति होश को साधा, वैसे ही अब विचारों के प्रति करो। विचार शरीर से ज्यादा सूक्ष्म हैं, और फलतः ज्यादा कठिन भी हैं। और जब तुम विचारों के प्रति जागोगे, तब तुम आश्चर्यचकित होओगे कि भीतर क्या–क्या चलता है। यदि तुम किसी भी समय भीतर क्या चलता है, उसे लिख डालो, तो तुम चकित होओगे। तुम भरोसा ही न कर पाओगे कि भीतर यह सब क्या चलता है! फिर दस मिनट के बाद इसे पढ़ो– तुम पाओगे कि भीतर एक पागल मन बैठा हुआ है! चूंकि हम होशपूर्ण नहीं होते, इसलिए यह सब पागलपन अंतर्धारा की तरह चलता रहता है। यह प्रभावित करता है– जो कुछ तुम करते हो उसे या जो कुछ तुम नहीं करते उसे। सबकुछ प्रभावित होता है। और इन सबका जोड़ ही तुम्हारा जीवन बनने वाला है। इसलिए इस भीतर के पागल व्यक्ति को बदलना होगा। और होश का चमत्कार यह है कि तुम्हें और कुछ भी नहीं करना है सिवाय होशपूर्ण होने के। इसे देखने की घटनामात्र ही इसका रूपांतरण है। धीरे–धीरे यह पागलपन विसर्जित हो जाता है। धीरे–धीरे विचार एक लयबद्धता ग्रहण करने लगते हैं; उनकी अराजकता हट जाती है और उनकी एक सुसंगतता प्रकट होने लगती है। और फिर एक ज्यादा गहन शांति उतरती है। फिर जब तुम्हारा शरीर और मन शांतिपूर्ण है, तब तुम देखोगे कि वे भी परस्पर लयबद्ध हैं, उनके बीच एक सेतु है। अब वे विभिन्न दिशाओं में नहीं दौड़ते; अब वे दो घोड़ों पर सवार नहीं

होते। पहली बार भीतर एक सुख–चैन आया है और यह सुख–चैन बहुत सहायक होता है, तीसरे तल पर ध्यान साधने में... और वह है– अपनी अनुभूतियों और भावदशाओं के प्रति होशपूर्ण होना।

होश का तीसरा चरण–

यह सूक्ष्मतम तल है और सबसे कठिन भी। लेकिन यदि तुम विचारों के प्रति होशपूर्ण हुए हो, तब यह केवल एक कदम आगे है। कुछ ज्यादा गहन होश और तुम अपने भावों और अनुभूतियों के प्रति सजग हो जाओगे। एक बार तुम इन तीन आयामों में होशपूर्ण हो जाते हो, फिर ये तीनों जुड़कर एक ही घटना बन जाते हैं। जब ये तीन एक साथ हो जाते हैं–एक साथ क्रियाशील और निनादित हो उठते हैं, तब तुम इनका संगीत अनुभव कर सकते हो, वे तीनों एक सुर–ताल बन जाते हैं ... तब चौथा चरण तुरीय घटता है– उसे तुम कर नहीं सकते। चौथा अपने से होता है। यह समग्र अस्तित्व से आया उपहार है... जो प्रथम तीन चरणों को साध चुके हैं, उनके लिए यह एक पुरस्कार है।

होश का चरम शिखर

चौथा चरण होश का चरम शिखर है जो व्यक्ति को जाग्रत बना देता है। व्यक्ति होश के प्रति जागरूक हो जाता है– यह है चौथा चरण। व्यक्ति बुद्ध हो जाता है, जाग जाता है। और इस जागरण में ही अनुभूति होती है कि परम आनंद क्या है। शरीर जानता है देह–सुख; मन जानता है प्रसन्नता; हृदय जानता है हर्षोल्लास और चौथा... तुरीय जानता है आनंद। आनंद लक्ष्य है संन्यास का, सत्य के खोजी का... और जागरूकता है उसके लिए मार्ग।

महत्त्व की बात है कि तुम जागरूक हो, कि तुम होशपूर्ण होना भूले नहीं हो, कि तुम साक्षी हो, द्रष्टा हो, सचेत हो। और जैसे–जैसे देखने वाला, द्रष्टा ज्यादा सघन, ज्यादा थिर, ज्यादा अकंप होने लगता हैः एक रूपांतरण घटित होता है, दृश्य विसर्जित होने लगते हैं। पहली बार द्रष्टा स्वयं दृश्य बन जाता है। देखने वाला स्वयं दृश्य हो जाता है। तुम घर वापस आ गए।

–ध्यानयोग : प्रथम और अंतिम मुक्ति

ध्यान का विज्ञान

–ओशो

ध्यान में कुछ अनिवार्य तत्व हैं... विधि कोई भी हो, वे अनिवार्य तत्व हर विधि के लिए आवश्यक हैं। पहला है एक विश्रामपूर्ण अवस्था; मन के साथ कोई संघर्ष नहीं, मन पर कोई नियंत्रण नहीं; कोई एकाग्रता नहीं। दूसराः जो भी चल रहा है उसे बिना किसी हस्तक्षेप के, बस शांत सजगता से देखो भर... शांत होकर, बिना किसी निर्णय और मूल्यांकन के, बस मन को देखते रहो।

ये तीन बातें हैंः विश्राम, साक्षित्व, अनिर्णय– और धीरे–धीरे एक गहन मौन तुम पर उतर आता है। तुम्हारे भीतर की सारी हलचल समाप्त हो जाती है। तुम हो, लेकिन 'मैं हूं' का भाव नहीं है– बस एक शुद्ध आकाश है। ध्यान की एक सौ बारह विधियां हैं; मैं उन सभी विधियों पर बोला हूं। उनकी संरचना में भेद है, परंतु उनके आधार वही हैंः विश्राम, साक्षित्व और एक निर्विवेचनापूर्ण दृष्टिकोण।

1–खेलपूर्ण रहो

लाखों लोग ध्यान से चूक जाते हैं क्योंकि ध्यान ने गलत अर्थ ले लिए हैं। ध्यान बहुत गंभीर लगता है, उदास लगता है, उसमें कुछ चर्च वाली बात आ गई है; लगता है यह उन्हीं लोगों के लिए है जो या तो मर गए हैं या करीब–करीब मर गए हैं–जो उदास हैं, गंभीर हैं, जिनके चेहरे लंबे हो गए हैं; जिन्होंने उत्साह, मस्ती, प्रफुल्लता, उत्सव सब खो दिया है।

यही तो ध्यान के गुणधर्म हैंः जो व्यक्ति वास्तव में ध्यानी है, वह खेलपूर्ण होगा। जीवन उसके लिए मस्ती है, एक लीला है, एक खेल है। वह जीवन का परम आनंद लेता है, वह गंभीर नहीं होता, विश्रामपूर्ण होता है।

2–धैर्य रखो

जल्दबाजी मत करो। बहुत बार जल्दबाजी से ही देर लग जाती है। जब तुम्हारी प्यास जगे, तो धैर्य से प्रतीक्षा करो। जितनी गहन प्रतीक्षा होगी, उतनी ही जल्दी वह आएगा।

तुमने बीज बो दिए, अब छाया में बैठे रहो और देखो क्या होता है। बीज टूटेगा, खिलेगा, लेकिन तुम प्रक्रिया को तेज नहीं कर सकते। क्या हर चीज के लिए समय नहीं चाहिए? तुम कार्य तो करो, लेकिन परिणाम परमात्मा पर छोड़ दो। जीवन में कुछ भी व्यर्थ नहीं जाता–विशेषतः सत्य की ओर उठाए गए कदम।

परंतु कई बार अधैर्य उठता है; प्यास के साथ ही आता है अधैर्य, पर वह बाधा है।

प्यास को बचा लो और अधैर्य को जाने दो। अधैर्य को प्यास के साथ मिलाओ मत। प्यास में उत्कंठा तो होती है परंतु कोई संघर्ष नहीं होता; अधैर्य में संघर्ष होता है और कोई उत्कंठा नहीं होती। अभीप्सा में प्रतीक्षा तो होती है परंतु कोई मांग नहीं होती; अधैर्य में मांग होती है और कोई प्रतीक्षा नहीं होती। प्यास में तो मौन आंसू होते हैं; अधैर्य में बेचैन संघर्ष होता है।

सत्य पर आक्रमण नहीं किया जा सकता; वह तो समर्पण से पाया जाता है, संघर्ष से नहीं। उसे समग्र समर्पण से जीता जाता है।

3–परिणाम मत खोजो

अहंकार परिणामोन्मुख है, मन सदा परिणाम के लिए लालायित रहता है। मन का कर्म में कोई रस नहीं होता, परिणाम में ही रस होता है– इससे मुझे क्या मिलेगा? यदि कृत्य से गुजरे बिना ही मन परिणाम पा सके, तो वह छोटे मार्ग का ही चुनाव करेगा।

यही कारण है कि शिक्षित लोग चालाक हो जाते हैं, क्योंकि वे छोटे मार्ग खोजने में सक्षम होते हैं। यदि तुम न्यायोचित ढंग से धन कमाओ, तो तुम्हारा पूरा जीवन भी इसमें लग सकता है। लेकिन यदि तुम तस्करी से, जुए से, या किसी और ढंग से– राजनेता, प्रधानमंत्री या राष्ट्रपति बनकर– धन कमा सको तो सभी छोटे मार्ग तुम्हें उपलब्ध होंगे। शिक्षित व्यक्ति चालाक हो जाता है। वह बुद्धिमान नहीं बनता, बस चालाक हो जाता है। वह इतना चालाक हो जाता है कि बिना कुछ किए सबकुछ पा लेना चाहता है।

ध्यान उन्हीं लोगों को घटता है जो परिणामोन्मुख नहीं होते। ध्यान परिणामोन्मुख न होने की दशा है।

4–बेहोशी का भी सम्मान करो

जब होश में हो तो होश का आनंद लो, और जब बेहोश हो तो बेहोशी का आनंद लो। कुछ भी गलत नहीं है, क्योंकि बेहोशी एक विश्राम की भांति है; वरना होश एक तनाव हो जाता। यदि तुम चौबीस घंटे जागे रहो, तो कितने दिन तुम सोचते हो कि जीवित रहोगे?

भोजन के बिना मनुष्य तीन महीने जी सकता है; नींद के बिना तीन सप्ताह में ही वह विक्षिप्त हो जाएगा और आत्मघात का प्रयास करेगा। दिन में तुम सजग रहते हो, रात में तुम विश्राम करते हो। और वह विश्राम तुम्हें दिन में, ताजे होकर, और सजग होने में मदद करता है। ऊर्जाएं विश्राम की एक अवधि से गुजर जाती हैं और सुबह ज्यादा जीवंत हो जाती हैं।

ध्यान में भी ऐसा ही होगा। कुछ क्षण के लिए तुम बिल्कुल होश में होते हो, शिखर पर होते हो और फिर कुछ क्षण के लिए घाटी में पहुंच जाते हो, विश्राम करते हो। होश

विदा हो गया, तुम भूल गए। लेकिन इसमें क्या गलत है? यह तो सीधी बात है। बेहोशी से फिर होश उठेगा, ताजा होकर, युवा होकर और यह चलता रहेगा। यदि तुम दोनों का आनंद ले सको तो तुम तीसरे हो जाते हो, और यह सूत्र समझने जैसा हैः यदि तुम दोनों का आनंद ले सको, इसका अर्थ हुआ कि तुम दोनों ही नहीं हो–न होश, न बेहोशी–तुम तो वह हो जो दोनों का आनंद लेता है। तब पार का कुछ प्रवेश कर जाता है। वास्तव में, यही वास्तविक साक्षी है। तुम सुख का आनंद लेते हो, उसमें क्या गलत है? जब सुख गया और तुम दुखी हो गए तो दुख में क्या गलत है? उसका आनंद लो। एक बार तुम दुख का आनंद लेने में सक्षम हो जाओ, तो तुम दोनों ही नहीं रहते।

और यही मैं तुम्हें कहता हूं– यदि तुम दुख का आनंद ले सको, तो उसका अपना सौंदर्य है। सुख थोड़ा उथला है; दुख बहुत गहरा है, उसमें एक गहराई है। जो मनुष्य कभी दुखी नहीं हुआ वह उथला रहेगा, सतह पर ही रहेगा। दुख अंधेरी रात की तरह बहुत गहरा है। अंधकार में एक मौन है, और एक उदासी भी। सुख तो छलकता है; उसमें एक आवाज होती है। वह तो पर्वतों की सरिता जैसा है, आवाज पैदा होती है। लेकिन पर्वतों में कोई भी नदी बहुत गहरी नहीं हो सकती, सदा उथली होती है। जब नदी मैदानों में पहुंचती है तो गहरी हो जाती है, लेकिन फिर आवाज नहीं होती। नदी बहती चलती है जैसे बह ही न रही हो। दुख में एक गहराई है।

झंझट क्यों खड़ी करनी? जब सुखी हो, तो सुखी होओ, उसका आनंद लो। उससे तादात्म्य मत बनाओ। जब मैं कहता हूं सुखी होओ, तो मेरा अर्थ है– उसका आनंद लो। उसे एक जलवायु बन जाने दो, जो बदल जाएगी। सुबह दोपहर में बदल जाती है, दोपहर शाम में, और फिर रात आ जाती है। सुख को अपने चारों ओर एक वातावरण बन जाने दो। उसका आनंद लो, और जब उदासी आए तो उसका भी आनंद लो। कुछ भी हो, मैं तुम्हें उसका आनंद लेना सिखाता हूं। शांत बैठो और उदासी का आनंद लो, और अचानक उदासी उदासी नहीं रहती; वह स्वयं में एक सुंदर, शांत और मौन क्षण बन जाती है। उसमें कोई गलती नहीं है।

और फिर परम कीमिया घटित होती है, वह बिंदु आता है जहां तुम अचानक अनुभव करते हो कि तुम दोनों ही नहीं हो– न सुख, न दुख। तुम द्रष्टा हो; तुम शिखरों को भी देखते हो और घाटियों को भी; परंतु तुम दोनों ही नहीं हो। एक बार यह दशा उपलब्ध हो जाए, तो तुम हर बात का उत्सव मनाते चले जा सकते हो। फिर तुम जीवन का उत्सव मनाते हो, और मृत्यु का भी उत्सव मनाते हो।

–ध्यानयोगः प्रथम और अंतिम मुक्ति

ध्यान के लिए उचित स्थान

–ओशो

अगर ध्यान के लिए एक नियत जगह चुन सकें– एक छोटा–सा मंदिर, घर में एक छोटा–सा कोना, एक ध्यान–कक्ष, तो सर्वोत्तम है। फिर उस जगह का किसी और काम के लिए उपयोग न करें। क्योंकि हर काम की अपनी तरंगें होती हैं। उस जगह का उपयोग सिर्फ ध्यान के लिए करें और किसी काम के लिए उसका उपयोग न करें। तो वह जगह चार्ज्ड हो जाएगी और रोज हमारी प्रतीक्षा करेगी। वह जगह बहुत सहयोगी हो जाएगी। वहां एक वातावरण निर्मित हो जाएगा, एक तरंग निर्मित हो जाएगी, जिसमें हम सरलता से ध्यान में गहरे प्रवेश कर सकते हैं। इसी वजह से मंदिरों, मस्जिदों, चर्चों का निर्माण हुआ था– कोई ऐसी जगह हो, जिसका उपयोग सिर्फ ध्यान और प्रार्थना के लिए हो।

ध्यान के लिए अगर एक नियत समय चुन सकें, तो वह भी बहुत उपयोगी होगा, क्योंकि हमारा शरीर, हमारा मन, एक यंत्र है। अगर हम रोज एक नियत समय पर भोजन करते हैं, तो हमारा शरीर उस समय भोजन की मांग करने लगता है।

कभी आप एक मजेदार प्रयोग कर सकते हैं– अगर आप रोज एक बजे भोजन करते हैं और आप घड़ी देखें और घड़ी में एक बजे हों, तो आपको भूख लग जाएगी– भले ही घड़ी गलत हो और अभी ग्यारह या बारह ही बजे हों! हमारा शरीर एक यंत्र है।

हमारा मन भी एक यंत्र है। अगर हम एक नियत जगह पर, एक नियत समय पर रोज ध्यान करें, तो हमारे शरीर और मन में ध्यान के लिए भी एक प्रकार की भूख निर्मित हो जाती है। रोज उस समय पर शरीर और मन ध्यान में जाने की मांग करेंगे। यह ध्यान में जाने में सहयोगी होगा। एक भावदशा निर्मित होगी, जिसमें हम एक भूख बन जाएंगे, एक प्यास बन जाएंगे। शुरू–शुरू में यह बहुत सहयोगी होगा। जब तक ध्यान हमारे लिए इतना सहज न हो जाए कि हम कहीं भी, किसी भी समय ध्यान में जा सकें, तब तक मन और शरीर की इन यांत्रिक व्यवस्थाओं का उपयोग करना चाहिए।

इनसे एक वातावरण निर्मित होता है– कमरे में अंधेरा हो, अगरबत्ती या धूपबत्ती की खुशबू हो, एक सी लंबाई के व एक प्रकार के वस्त्र पहनें, एक से कालीन या चटाई का उपयोग करें, एक से आसन का उपयोग करें। इससे ध्यान नहीं हो जाता, लेकिन इससे मदद मिलती है। अगर कोई और इसकी नकल करे, तो उसे बाधा भी पड़ सकती है।

प्रत्येक को अपनी व्यवस्था खोजनी है। व्यवस्था सिर्फ इतना करती है कि उससे एक सुखद स्थिति निर्मित होती है। और जब हम सुखद स्थिति में प्रतीक्षा करते हैं, तो कुछ घटता है। जैसे नींद उतरती है, ऐसे ही परमात्मा उतरता है। जैसे प्रेम घटता है, ऐसे ही ध्यान घटता है। हम इसे प्रयास से नहीं ला सकते, हम इसे जबरदस्ती नहीं पा सकते।

ध्यान की विधि कैसे चुनें?

हमेशा उस विधि से शुरू करें, जो रुचिकर लगे। ध्यान को जबरदस्ती थोपना नहीं चाहिए। अगर जबरदस्ती ध्यान को थोपा गया, तो शुरुआत ही गलत हो जाएगी। जबरदस्ती की गई कोई भी चीज सहज नहीं हो सकती। अनावश्यक कठिनाई पैदा करने की कोई जरूरत नहीं है। यह बात अच्छे से समझ लेनी है। क्योंकि जिस दिशा में मन की सहज रुचि हो, उस दिशा में ध्यान सहजता से घटता है।

जो लोग शरीर के तल पर ज्यादा संवेदनशील हैं, उनके लिए ऐसी विधि है, जो शरीर के माध्यम से ही आत्यंतिक अनुभव पर पहुंचा सकती हैं। जो भाव-प्रवण हैं, भावुक प्रकृति के हैं, वे भक्ति-प्रार्थना मार्ग पर चल सकते हैं। जो बुद्धि-प्रवण हैं, बुद्धिजीवी हैं, उनके लिये ध्यान, सजगता, साक्षीभाव उपयोगी हो सकते हैं।

लेकिन मेरी ध्यान की विधियां एक प्रकार से अलग हटकर हैं। मैंने ऐसी ध्यान-विधियों की संरचना की है, जो तीनों प्रकार के लोगों द्वारा उपयोग में लाई जा सकती हैं। उनमें शरीर का पूरा उपयोग है, भाव का भी पूरा उपयोग है और होश का भी पूरा उपयोग है। तीनों का एक साथ उपयोग है और वे अलग-अलग लोगों पर अलग-अलग ढंग से काम करती हैं। शरीर, हृदय, मन- मेरी सभी विधियां इसी शृंखला में काम करती हैं। वे शरीर पर शुरू होती हैं, वे हृदय से गुजरती हैं, वे मन पर पहुंचती हैं और फिर वे मनातीत में अतिक्रमण कर जाती हैं।

स्मरण रहे, जो हमें रुचिकर लगता है, उसी में हम गहरे जा सकते हैं- केवल उसी में गहरे जा सकते हैं। रुचिकर लगने का मतलब ही यह है कि उसका हमसे तालमेल है। हमारा छंद उसकी लय से मेल खाता है। विधि के साथ हम एक हार्मनी में हैं। तो जब कोई विधि रुचिकर लगे, तो फिर और-और विधियों के लोभ में न पड़ें, फिर उसी विधि में और-और गहरे उतरें। उस विधि को प्रतिदिन या अगर संभव हो तो दिन में दो बार अवश्य करें। जितना हम इसे करेंगे, उतना आनंद बढ़ता जाएगा। किसी भी विधि को तभी छोड़ें जब आनंद आना बंद हो जाए। उसका मतलब है कि विधि का काम पूरा हो गया, अब दूसरी विधि की तलाश की जाए। कोई भी अकेली विधि हमें अंत तक नहीं ले जा सकती। इस यात्रा पर हमें कई बार ट्रेन बदलनी पड़ेगी। हर विधि हमें एक अमुक अवस्था तक पहुंचाएगी। उसके बाद उसका कोई उपयोग नहीं है। उसका काम पूरा हो गया।

दो बातें स्मरण रखनी हैं- जब किसी विधि में आनंद आए तो उसमें जितने गहरे जा सकें जाएं। लेकिन उसके आदी न हो जाएं, क्योंकि एक दिन उसके पार भी जाना है। अगर हम उसके बहुत आदी हो जाते हैं, तो यह भी एक प्रकार का नशा है, फिर हम उसे छोड़ नहीं सकते। अब हमें उसमें कोई आनंद नहीं आता- इससे कुछ मिलता भी

नहीं–लेकिन यह एक आदत हो गयी। फिर चाहें तो इसे हम करते रह सकते हैं, लेकिन हम गोल–गोल घूमते हैं, यह उसके आगे नहीं ले जा सकती।

तो आनंद मापदंड है। जब तक आनंद आए, जारी रखें। आनंद का कण भी पीछे न छूट जाए। उसका पूरा रस निचोड़ लें, एक बूंद भी बाकी न बचे। और फिर उसे छोड़ने की भी तैयारी रखें। फिर कोई दूसरी विधि चुन लें, जिसमें आनंद आता हो। हो सकता है, हमें कई बार विधि बदलनी पड़े। यह अलग–अलग लोगों के लिए अलग–अलग होगा, लेकिन ऐसी बहुत कम संभावना है कि एक विधि से पूरी यात्रा हो जाए।

लेकिन बहुत–सी विधियां एक साथ करने की भी जरूरत नहीं है, क्योंकि हम उलझन में पड़ सकते हैं। विपरीत प्रक्रियाएं एक साथ कर सकते हैं और तब तकलीफ होगी, दर्द होगा। तो ध्यान की कोई भी दो विधियां चुन लें और फिर उन्हें सतत करें। असल में, मैं तो चाहूंगा कि कोई एक ध्यान ही चुनें, यह सबसे अच्छा होगा। जो ध्यान हमें भाए, उसे दिन में कई बार करना ज्यादा बेहतर है। इससे उसमें गहराई आती है। अगर हम कई ध्यान एक साथ करते हैं– एक दिन एक, दूसरे दिन दूसरा। और हम अपने ही ध्यान गढ़ लेते हैं– तो ऊहापोह बढ़ेगा। 'विज्ञान भैरव तंत्र' में ध्यान की एक सौ बारह विधियां हैं। हम पागल हो सकते हैं। हम वैसे ही पागल हैं!

ध्यान की ये विधियां कोई मनोरंजन नहीं हैं। ये कभी–कभी खतरनाक भी हो सकती हैं। हम मन के सूक्ष्म, अति सूक्ष्म यंत्र के साथ खेल रहे हैं। कभी एक छोटी–सी चीज, जिसका हमें होश भी नहीं कि हम क्या कर रहे हैं, खतरनाक सिद्ध हो सकती है। इसलिए इन विधियों में कोई हेरफेर न करें और अलग–अलग विधियों को मिलाकर अपनी ही कोई खिचड़ी विधि न ईजाद करें। कोई भी दो विधियां चुन लें और कुछ सप्ताह उनका प्रयोग करके देखें।

'जब किसी विधि में आनंद आए तो उसमें जितने गहरे जा सके जाएं। लेकिन उसके आदी न हो जाएं, क्योंकि एक दिन उसके पार भी जाना है। अगर हम उसके बहुत आदी हो जाते हैं, तो यह भी एक प्रकार का नशा है, फिर हम उसे छोड़ नहीं सकते। अब उसमें कोई आनंद भी नहीं आता–इससे कुछ मिलता भी नहीं–लेकिन यह एक आदत हो गयी। फिर चाहे तो इसे हम करते रह सकते हैं, लेकिन हम गोल–गोल घूमते हैं, यह उसके आगे नहीं ले जा सकती। तो आनंद ही मापदंड है।'

मन अशांत हो तो गहरी सांस लो –ओशो

ऐसी परिस्थिति में, जब आप सक्रिय ध्यान विधियों का प्रयोग नहीं कर सकते, आपके लिये एक साधारण लेकिन प्रभावशाली निष्क्रिय विधि उपलब्ध है। श्वास को देखना एक ऐसी विधि है जिसका प्रयोग कहीं भी, किसी भी समय किया जा सकता है, तब भी जब आपके पास केवल कुछ मिनटों का समय हो। आती–जाती श्वास के साथ आपको केवल छाती या पेट के उतार–चढ़ाव के प्रति सजग होना है। या फिर इस विधि को आजमाएं–

प्रथम चरण: भीतर जाती श्वास को देखना।

अपनी आंखें बंद करें अपने श्वास पर ध्यान दें। पहले श्वास के भीतर आने पर, जहां से यह आपके नासापुटों में प्रवेश करता है, फिर आपके फेफड़ों तक।

दूसरा चरण: इससे आगे आने वाले अंतराल पर ध्यान।

श्वास के भीतर आने के तथा बाहर जाने के बीच एक अंतराल आता है। यह अत्यंत मूल्यवान है। इस अंतराल को देखें।

तीसरा चरण: बाहर जाती श्वास पर ध्यान। अब प्रश्वास को देखें।

चौथा चरण: इससे आगे आने वाले अंतराल पर ध्यान।

प्रश्वास के अंत में दूसरा अंतराल आता हैः उस अंतराल को देखें। इन चारों चरणों को दो से तीन बार दोहराएं– श्वसन–क्रिया के चक्र को देखते हुए, इसे किसी भी तरह बदलने के प्रयास के बिना, बस केवल नैसर्गिक लय के साथ।

पांचवां चरण: श्वासों में गिनती।

अब गिनना प्रारंभ करेंः भीतर जाती श्वास– गिनें, एक (प्रश्वास को न गिनें) भीतर जाती श्वास– दो; और ऐसे ही गिनते जायें दस तक। फिर दस से एक तक गिनें। कई बार आप श्वास को देखना भूल सकते हैं या दस से अधिक गिन सकते हैं। फिर एक से गिनना शुरू करें।

इन दो बातों का ध्यान रखना होगा– ...सजग रहना, विशेषतः श्वास की शुरुआत व अंत के बीच के अंतराल के प्रति। उस अंतराल का अनुभव हैं आप, आपका अंतर्तम केंद्र, आपका अंतस। और दूसरी बात– ....गिनते जायें परंतु दस से अधिक नहीं; फिर एक पर लौट आयें; और केवल भीतर जाती श्वास को ही गिनें। इनसे सजगता बढ़ने में सहायता मिलती है। आपको सजग रहना होगा नहीं तो आप बाहर जाती श्वास को गिनने लगेंगे या फिर दस से ऊपर निकल जायेंगे। यदि आपको यह ध्यान विधि पसंद आती है तो इसे जारी रखें। यह बहुमूल्य है।

जमीन पर जापान शायद अकेला देश है, जहां अधिकतम लोग प्रसन्नचित दिखाई पड़ते हैं। इस संबंध में खोज–बीन चलती थी कि वहां के लोगों की प्रसन्नता का कारण क्या है? तो बहुत अजीब बात पता चली और वह यह कि जापान में छोटे–छोटे बच्चों को मां–बाप एक बात जरूर सिखाते हैं– कि जब भी क्रोध हो, मन अशांत हो, चिंतित हो, तो गहरी श्वास लो और

श्वास पर ध्यान करो। इससे उनके पूरे व्यक्तित्व में बुनियादी अंतर हुआ है।

तो इसे कभी भी, दिन में किसी भी क्षण में अशांति मालूम पड़े, क्रोध मालूम पड़े, चिंता मालूम पड़े तो एक मिनट के लिए प्रयोग करके देखें। गहरी श्वास ले और श्वास पर ध्यान करें। और जब ध्यान के लिए बैठें, तब तो अनिवार्य रूप से दस मिनट के लिए पहले गहरी श्वास लेकर। अगर इस प्रयोग को ही एक घंटे पूरा किया जाए, तो अलग से और कुछ करने की जरूरत भी नहीं है।

बुद्ध की ध्यान की प्रक्रिया का नाम है– 'अनापानसतीयोग'। बुद्ध अपने भिक्षुओं को एक ही बात सिखाते थे, और वह यह कि तुम अपनी श्वास के आने–जाने की स्मृति बनाए रखो। अनापानसतीयोग का मतलब है– श्वास का आना–जाना और उसकी स्मृति। जानते हुए कि श्वास भीतर आई, जानते हुए कि श्वास बाहर गई। अगर कोई व्यक्ति जितना ज्यादा श्वास पर ध्यान रख सके– रास्ते पर चलते हुए, बस में बैठे हुए, खाना खाते हुए, रास्ते पर चलते हुए–उतना ही उसका मन गहरी से गहरी शांति की पर्तों में उतरता चला जाता है।

अगर इस प्रयोग को ही एक घंटा रोज किया जा सके, तो तीन महीने में आप एक रूपांतरण देखेंगे। और कल्पना भी न कर पाएंगे कि इतना छोटा–सा प्रयोग इतने बड़े परिणाम कैसे ला सकता है? लाने के कारण हैं। जैसे ही हम गहरी श्वास लेते हैं और श्वास पर ध्यान करते हैं, तो श्वास हमारी आत्मा और शरीर को जोड़ने वाला सेतु है, ब्रिज है। उसी के द्वारा आत्मा और शरीर जुड़े हुए हैं। जब हम गहरी श्वास लेते हैं, तो शरीर और आत्मा के बीच का फासला बड़ा हो जाता है। और जब हम श्वास पर ध्यान करते हैं, तो शरीर धीरे–धीरे बाहर अलग पड़ा रह जाता है, आत्मा अलग हो जाती है और ध्यान बीच के अंतराल पर हो जाता है।

अगर एक घंटा रोज तीन महीने तक सिर्फ इतना ही प्रयोग कर सकें, तो आपका शरीर आपसे अलग है, इसकी स्पष्ट प्रतीति हो जाएगी, यह किसी शास्त्र में पढ़ने जाना नहीं पड़ेगा। न केवल यह, बल्कि जितने लोग यहां बैठे हैं, अगर इतने लोग इस प्रयोग को कर सकें, तो कम से कम तीस परसेंट लोगों को तो किसी न किसी दिन यह भी अनुभव हो सकता है कि शरीर अलग पड़ा है, मैं अलग खड़ा हूं, और अपने ही पड़े हुए शरीर को देख रहा हूं। शरीर के बाहर होने का अनुभव भी हो सकता है। और एक बार भी यह अनुभव हो जाए, तो मृत्यु समाप्त हो गई। क्योंकि तब हम जानते हैं कि शरीर ही मरेगा, मेरे मरने का अब कोई कारण नहीं है। और जिस व्यक्ति के जीवन से मृत्यु का भय चला जाए, उस व्यक्ति के जीवन से सभी भय चले जाते हैं। क्योंकि मूल भय मृत्यु है। और जिस व्यक्ति को ऐसा दिखाई पड़ जाए कि मैं शरीर से अलग हूं, उसके जीवन में वह द्वार खुल जाता है जो प्रभु का द्वार है। लेकिन ऐसे दस मिनट शुरू में इसे करें।

– ओशो, साक्षी की साधना–2

सुप्रभात ध्यान

–मा अमृत प्रिया

बुद्ध एक सांझ एक नदी के पास से गुजरे; खड़े हो गए। बच्चे नदी की रेत में किले बना रहे थे, महल बना रहे थे और बुद्ध ने अपने शिष्यों से कहा, जरा गौर से देखो। यही तुम भी करते रहे हो जिंदगी–भर। रेत के मकान, रेत के महल! इधर बने, इधर मिटे। और बुद्ध ने कहा, सुनो, दिन में बहुत बार ये बच्चे एक–दूसरे से लड़े भी। क्योंकि किसी से किसी के महल को धक्का लग गया। किसी का पैर किसी के महल पर पड़ गया और महल गिर गया। इन्होंने एक–दूसरे को मारा–पीटा भी, एक–दूसरे को गाली–गलौज भी दी। अब सांझ आ गई है और सूरज ढल गया है, और इनके घरों से मां की आवाज आ रही है कि बच्चो अब लौट आओ, खाने का समय हुआ। अब ये बच्चे लौट चले। दिन–भर जिन मकानों के लिए लड़े थे, उन्हीं पर खुद ही उछल–कूद कर, उनको गिराकर, मिटाकर नाचते–गाते, मस्ती में घर वापस जा रहे हैं।

बुद्ध ने कहा, ऐसी ही यह जिंदगी है। मौत आती है, सूरज ढल जाता है, पुकार आती है कि अब लौट चलो। सब पड़ा रह जाता है यहीं। वे ही घर जिनके लिए हम खूब लड़े, वे ही महल जिनके लिए हम मरने और मारने को उतारू थे। हाथ में हम ले क्या जाते हैं? तो इससे पहले कि हमारे जीवन का सूरज ढल जाए, हमें भी अपने घर जाने की पुकार आ जाए– हम जागें। यह जीवन रूपी मौका व्यर्थ न गंवाएं। और उसी जागने के उपाय का नाम है– ध्यान।

आज का ध्यान, जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है– 'सुप्रभात ध्यान' अर्थात् 'गुड मॉर्निंग मेडिटेशन'। यदि हमारी मॉर्निंग गुड होगी, तो निश्चित ही पूरा दिन भी अच्छा होगा। कहा जाता है कि अगर पहला कदम ठीक दिशा में हो, तो आगे की यात्रा सरल हो जाती है– 'वेल बिगन इज़ हाफ डन'। यह विधि प्राणायाम व मुद्राओं का मिश्रण है। इससे हमें शारीरिक व मानसिक लाभ तो मिलेगा ही, इसके साथ–साथ मन को ठहराव मिलने से, हमें अपने भीतर गहरे उतरने में भी सहयोग मिलेगा। अतः इससे आध्यात्मिक तल पर भी लाभ मिलेगा।

प्राणायाम शब्द दो शब्दों के योग से बना है– प्राण + आयाम, अर्थात् प्राणों को आयाम देना। प्राणों को दिशा देना। पूरक (सांस भरना), कुंभक (सांस रोकना) व रेचक (सांस छोड़ना) क्रमशः प्राणायाम के क्रम में आते हैं। श्वास भीतर लेते समय भाव करें कि प्राण शक्ति और प्रसन्नता भीतर उतर रही है तथा श्वास छोड़ते हुए भाव करें कि समस्त दुर्गुण व तनाव बाहर विसर्जित हो रहे हैं। प्राणायाम से स्वास्थ्य लाभ मिलता है और मन शांत होने लगता है।

हमारा शरीर पांच तत्वों से बना है– जल, पृथ्वी, आकाश, वायु और अग्नि। हमारे हाथ की पांच उंगलियां इन्हीं पांच तत्वों का प्रतिनिधित्व करती हैं। हाथों की उंगलियों के मिलान से बनी भिन्न–भिन्न आकृतियों को ही हम मुद्रा कहते हैं। मुद्राएं अनेक हैं एवं प्रत्येक मुद्रा के भिन्न–भिन्न लाभ हैं। इस ध्यान में हम प्राणायाम व मुद्रा दोनों का ही साथ–साथ प्रयोग करेंगे। इस ध्यान के कुल 7 चरण हैं।

प्रथम चरण : व्यायाम; व्यायाम द्वारा हम शरीर में सुप्त ऊर्जा को जगाएंगे। कुछ देर के लिए जॉगिंग करेंगे। जॉगिंग द्वारा हमारी ऊर्जा जगती है और किसी भी ध्यान में डूबने के लिए ऊर्जा का जागरण अनिवार्य है। बिना ऊर्जा जागरण के अन्तरयात्रा सुगम न हो सकेगी।

दूसरा चरण : प्राणमुद्रा के साथ अनुलोम–विलोम प्राणायाम।

तीसरा चरण : अपानमुद्रा के साथ कपालभाति प्राणायाम।

चौथा चरण : व्यानमुद्रा के साथ उज्जायी प्राणायाम।

पांचवां चरण : ज्ञानमुद्रा के साथ भ्रामरी प्राणायाम।

छठवां चरण : शिथिलीकरण।

सातवां चरण : आत्मस्मरण यानि अपने में ही ठहरना। होशपूर्ण निष्क्रियता। किसी क्रिया में उलझना नहीं, खोना नहीं है। सहज फैली हुई जागरूकता ही हमारा स्वभाव है।

रुकूं तो मंजिलें ही मंजिलें हैं, चलूं तो रास्ता कोई नहीं है....।

आज की इस सुंदर सुबह के लिए परमात्मा का बारंबार धन्यवाद करें। यह शांति, यह आनंद हमारे पूरे जीवन पर फैल जाए। प्रेम से व अहोभाव से भरें!

विपस्सना ध्यान

–ओशो

यह ध्यान विधि भगवान बुद्ध की अमूल्य देन है। ढाई हजार वर्षों के बाद भी उसकी महिमा में, उसकी गरिमा में ज़रा भी कमी नहीं हुई। और ओशो का मानना है कि आधुनिक मनुष्य की अंतर्यात्रा की साधना में विपश्यना सर्वाधिक कारगर सिद्ध हो सकती है। विपश्यना का अर्थ है– अंतर्दर्शन यानी भीतर देखना। यह ध्यान पचास मिनट का है और बैठकर करना है। बैठें, शरीर और मन को तनाव न दें और आंखें बंद रखें। फिर अपने ध्यान को आती–जाती श्वास पर केंद्रित करें। श्वास को किसी तरह की व्यवस्था नहीं देनी है; उसे उसके सहज ढंग में चलने दें। सिर्फ ध्यान को उसकी यात्रा के साथ कर दें।

श्वास की यात्रा में नाभि–केंद्र के पास कोई जगह है, जहां श्वास अधिक महसूस होती है। वहां विशेष ध्यान दें। अगर बीच में ध्यान कहीं चला जाए तो उससे घबराएं न। अगर मन में कोई विचार या भाव उठे तो उसे भी सुन लें, लेकिन फिर–फिर प्रेमपूर्वक ध्यान को श्वास पर लाएं। और नींद से बचें।

विपस्सना ध्यान (संगीत व निर्देश सहित)

आज की ध्यान विधि हमारी सांसों से संबंधित हैं। श्वासों का महत्त्व समझाते हुए परमगुरु ओशो कहते हैं– बुद्ध ने सांसों का प्रयोग एक ही तीर से दो काज करने के लिए किया। पहला सजगता के लिए और जहां तक श्वास जाएगी वहां तक जागरण भी फैलेगा। इसी भांति शरीर के अणु–अणु को होश से भर देने का उपाय है यह प्रयोग। बुद्ध कहा करते हैं– होशपूर्वक श्वास लो।

सांस सबसे सरल माध्यम है स्वयं से जुड़ने का, अपने केन्द्र तक पहुंचने का। बुद्ध का मार्ग मध्यमार्ग था। दोनों अतियों से बचकर– मध्य में संतुलन। श्वास मध्य में है। न बाहर है, न भीतर है। भीतर है चेतना। बाहर है शरीर। दोनों के मध्य में जोड़ सेतु की तरह है श्वास। पदार्थ से परमात्मा की तरफ जाने के लिए, शरीर से आत्मा की तरफ जाने के लिए श्वास एक पुल का काम करती हैं। शरीर एक किनारा है, आत्मा दूसरा किनारा है और इस नदी के ऊपर श्वास का पुल है। यह मध्य में है और इसलिए बुद्ध ने विपस्सना पर इतना ज़ोर दिया। वे मध्यम् मार्ग के प्रवर्तक हैं। वे कहते हैं, द गोल्डन मीन, मज्झिम निकाय। ठीक बीच में चलो। न तो पदार्थवादी हो जाओ, न परमात्मवादी हो जाओ। श्वास के प्रति जागरूक होओ। श्वास का एक छोर पौद्गलिक है, पदार्थ है। श्वास का दूसरा छोर अपौद्गलिक है, चैतन्य है।

एक युवक, राजकुमार श्रोण, बुद्ध के पास दीक्षित हुआ। राजधानी भरोसा न कर सकी। किसी ने कभी कल्पना में भी नहीं सोचा था कि श्रोण और भिक्षु हो जायेगा! सम्राट

था श्रोण, और ख्यातिनाम सम्राट था। उसकी ख्याति भोगी की तरह थी। उसके राजमहल में उस जमाने की सबसे सुंदर स्त्रियां थीं। उसके महल में सारी दुनिया के कोनों–कोनों से आकर इकट्ठी की गई श्रेष्ठतम शराब थी।

दूसरे भिक्षु तो ठीक पटे हुए रास्ते पर चलते हैं, लेकिन श्रोण कांटों और झाड़ियों में चलता है। उसके पैर लहूलुहान हो गये। धूप होती तो दूसरे भिक्षु वृक्षों की छाया में बैठते, श्रोण धूप में ही खड़ा रहता। दूसरे भिक्षु तो वस्त्र पहनते, उसने सिर्फ लंगोटी लगा रखी थी। और ऐसा लगता जैसे लंगोटी भी छोड़ देने की आतुरता है। और एक दिन उसने लंगोटी भी छोड़ दी। दूसरे भिक्षु तो दिन में एक बार भोजन करते, श्रोण दो दिन में एक बार भोजन करता। दूसरे भिक्षु तो बैठकर भोजन करते, श्रोण खड़े–खड़े ही भोजन करता। अन्य भिक्षु तो पात्र रखते, श्रोण पात्र भी नहीं रखता था। करपात्री था, हाथ में ही भोजन लेता था। सूख गया। उसकी बड़ी सुंदर देह थी। दूर–दूर से लोग उसकी देह को देखने आते थे। उसका चेहरा बड़ा लावण्यपूर्ण था, अति सुंदर था। भिक्षु हो जाने के तीन महीने बाद उसे कोई देखता, तो याद भी नहीं कर सकता था कि यही सम्राट श्रोण है। पैरों में छाले पड़ गये थे, शरीर काला पड़ गया था, सूखकर हड्डी–हड्डी हो गया था; लेकिन वह और कसे जाता था।

फिर तो श्रोण ने भोजन भी बंद कर दिया। उसने पानी लेना भी बंद कर दिया। अति, और अति पर जाने लगी। फिर तो ऐसा लगा कि अब वह दो–चार दिन का मेहमान है और मर जायेगा। तो बुद्ध उसके द्वार पर गए। वृक्ष के नीचे झोंपड़ा बना दिया था उसके विश्राम के लिए। वह पड़ा था। बुद्ध ने उससे कहा– श्रोण, मैं तुझसे एक बात पूछने आया हूं। मैंने सुना है कि जब तू सम्राट था तो तुझे वीणा बजाने की बड़ी आतुरता रहती थी। तू वीणा बजाने में बड़ा कुशल भी था। तेरा बड़ा रस था वीणा में। मैं तुझसे एक प्रश्न पूछने आया हूं– जब वीणा के तार बहुत ढीले हों तो संगीत पैदा होता है या नहीं? श्रोण ने कहा– आप भी कैसी बात करते हैं, आप जानते हैं भलीभांति, तार बहुत ढीले हों तो संगीत कैसे पैदा होगा, वह टंकार ही पैदा नहीं हो सकती! बुद्ध ने कहा– फिर मैं यह पूछता हूं कि तार अगर बहुत कसे हों तो संगीत पैदा होता है या नहीं? श्रोण ने कहा– बहुत कसे हों तो छूते ही तार टूट जायेंगे, संगीत पैदा नहीं होगा। सिर्फ तारों के टूटने की आवाज आयेगी। साज के टूटने की आवाज आयेगी, संगीत कैसे जन्मेगा? तब बुद्ध ने कहा– मैं तुझे याद दिलाने आया हूं। जैसे तुझे वीणा का अनुभव है, वैसे ही मुझे जीवन–वीणा का अनुभव है। मैं तुझसे कहता हूं, जीवन के तार भी बहुत कसे हों तो संगीत पैदा नहीं होता, और जीवन के तार बहुत ढीले हों तो भी संगीत पैदा नहीं होता। तार मध्य में होने चाहिए श्रोण; न बहुत कसे, न बहुत ढीले। संगीतज्ञ की बड़ी से बड़ी कुशलता इसी में है कि वह तारों को ठीक

मध्य में ले आये, उसी को साज का बिठाना कहते हैं।

यदि आप थोड़े जागेंगे तो पाएंगे– जब हम प्रसन्न होते हैं तब सांस का विशेष पैटर्न होता है। जब हम दुखी होते हैं तब अलग पैटर्न होता है। हर भावना, मूड के साथ श्वास का एक खास पैटर्न जुड़ा हुआ है। यदि हम अपनी चित्त दशा बदलेंगे तो सांस का पैटर्न भी बदलेगा। उल्टा भी सत्य है– यदि हम अपनी सांस के पैटर्न को बदलेंगें तो चित्त की दशा भी परिवर्तित होगी। इसका यह अर्थ होता है– हमारा शरीर, मन, हृदय; सब कुछ सांसों से जुड़ा हुआ है। तो सांस के माध्यम से ध्यान में उतरना सरल होगा और खूब प्रभावशाली भी।

हमारी सांस जिस पर पूरा जीवन टिका है अगर हम उसके प्रति जाग्रत होंगे तो इस सजगता की ज्योति से हमारा कोना–कोना, एक–एक कोष्ठ रोशन हो उठेगा। भगवान बुद्ध ने जगत को एकदम सरल लेकिन बहुत कारगर विधि दी– इसका नाम है विपस्सना।

यह शब्द बना है– वि और पश्यना से। पश्यना का अर्थ होता– देखना, वि का अर्थ होता– पीछे लौटकर। विपस्सना का अर्थ हुआ, पलटकर देखना। सजग होकर स्वयं को देखना। विपस्सना का मतलब होता है साक्षी होना, द्रष्टा होना। आज हम अपने सांसों के प्रति भी होश और स्वयं के प्रति भी होश को साधने का प्रयास करेंगे।

जब आप सांसों के प्रति जागेंगे तो पाएंगे कि अहर्निश आप सांसों के माध्यम से अस्तित्व से जुड़े हुए हैं। जब इस एकत्व का स्मरण आता है तो व्यक्ति आह्लाद से भर जाता है। टूटने में विषाद है, दर्द है। जुड़ने में, मिलने में आनंद है। जब हम एक व्यक्ति से जुड़ते हैं प्रेम में, तब खुशियों से भर जाता हैं जीवन। तो आप अभी सोच भी नहीं सकते कि जीवन कितना आनंदित होगा जब पूरी समष्टि के साथ एकत्व महसूस होता है।

अहंकार हमें तोड़ देता है, टुकड़े–टुकड़े कर देता है। हमें अहसास दिलाता है कि हम छोटे द्वीप हैं। सबसे काटकर, विलग, अकेला कर देता है। और वह ध्यान विधि ठीक उल्टा करती है– फिर से वह बीच की दीवारों का भ्रम तोड़कर हमें अस्तित्व के संग एकत्व की अनुभूति करवाती है।

प्रथम चरण है– मंगलकामना। शुरुआत करेंगे मंगलकामना से फिर यौगिक सांस लेंगे– हम तीन तरह के प्रयोग करेंगे। अंततः प्रयत्नरहित, एफर्टलेसनेस की दशा में उतरेंगे।

दूसरा– अंतर्कुंभक। लंबी गहरी सांस लें और जितनी देर आसानी से भीतर रोक सकते हैं रोके रहें। फिर छोड़ दें। यही क्रिया दोहराएं होशपूर्वक। यह जो सांस रोकने का क्षण है, यह बड़ा महत्त्वपूर्ण है। जब आप सांस के पैटर्न और आवाज के प्रति जागेंगे। तो आपकी सजगता गहराएगी, फिर धीरे–धीरे आप इससे भी सूक्ष्म के प्रति जाग

जाएंगे।

तीसरा– बहिर्कुंभक। लंबी सांस छोड़ें। बाहर फेंक दें। और फिर रोकें। जितना आसानी से हो सके, बिना किसी तनाव के। ... नहीं तो शरीर को कष्ट होगा फिर ध्यान में उतरना मुश्किल होगा।

चौथा– अनापानसती योग। लंबी गहरी सांस। अब प्रयत्न कम करते चलें। श्वास रहे और होश रहे।

'अनापानसती योग' का अर्थ हुआ आती–जाती श्वास को देखना। प्राण शब्द संस्कृत का पाली भाषा में पान कहलाता था। बुद्ध पाली भाषा का उपयोग करते थे। तो 'पान' का अर्थ है भीतर जाती श्वास और 'आपान' का अर्थ है बाहर आती श्वास। पान–आपान दोनों मिलकर अनापान कहलाए, आती–जाती श्वास। इन्सपिरेशन ऐण्ड एक्सपीरेशन। 'सती' का अर्थ है स्मृति। जैसे सम्मासति, सम्यक–स्मृति। अनापानसती यानि आती–जाती श्वासों का स्मरण और योग का अर्थ हैं जुड़ना तो आती–जाती श्वास के माध्यम से, उसका स्मरण रखते हुए धीरे–धीरे स्वयं से, अस्तित्व से, समष्टि से जुड़ना। यही है अनापानसती योग।

तीन प्रयोगों से शरीर और मन भी शान्त होने लगेगा। तब सारे प्रयास छोड़ें। अब साक्षीभाव। सांस को सामान्य होने दें। कोई विशेष पैटर्न न हो। जैसे चल रही है, वैसे चलने दें। बस उसके प्रति जागे रहें। यदि विपस्सना गलत ढंग से किया जाए, साधक केवल साँसों के प्रति ही जागरूक हो और स्वयं के प्रति मूर्च्छित हो, साक्षीभाव न साधे, तो भुलक्कड़पन पैदा होगा, याददाश्त कम होगी। इस बात का विशेष ख्याल रखना।

अंत में यह भी छोड़ दें। अब शांत हो जाएं, शिथिल हो जाएं। स्व–बोध में रमण करें।

इस ध्यान में कुल 7 चरण हैं।

पांचवां चरण– साक्षीभाव।

छठवां चरण– शिथिलीकरण।

सातवां चरण– आत्मस्मरण।

अंत में अहोभावपूर्वक ध्यान से लौटें।

कबीर साहब के वचन हैं–

मोको कहाँ ढूँढ़े रे बन्दे, मैं तो तेरे पास में।
खोजी हुए तो तुरते मिलिहों, पल भर की तलाश में।
कहे कबीर सुनो भई साधो, सब सांसों की सांस में।

इन सांसों के सांस में, अर्थात् गैप में, अंतराल में वह मिलता है। आओ चलते हैं उस परम मिलन के लिए।

सक्रिय ध्यान –ओशो

हमारे शरीर और मन में इकट्ठे हो गए दमित आवेगों, तनावों एवं रुग्णताओं का रेचन करने, अर्थात् उन्हें बाहर निकाल फेंकने के लिए ओशो ने इस नई ध्यान विधि का सृजन किया है। शरीर और मन के इस रेचन अर्थात् शुद्धिकरण से, साधक पुनः अपनी देह–ऊर्जा, प्राण–ऊर्जा, एवं आत्म–ऊर्जा के संपर्क में– उनकी पूर्ण संभावनाओं के संपर्क में आ जाता है– और इस तरह साधक आध्यात्मिक जागरण की ओर सरलता से विकसित हो पाता है।

सक्रिय ध्यान अकेले भी किया जा सकता है और समूह में भी। लेकिन समूह में करना ही अधिक परिणामकारी है।

स्नान करके, खाली पेट, ढीले वस्त्रों में, आंखों पर पट्टी बांधकर इसे करना चाहिए। यह विधि पूरी तरह प्रभावकारी हो सके, इसके लिए साधक को अपनी पूरी शक्ति से, समग्रता में इसका अभ्यास करना होगा। इसमें पांच चरण हैं। पहले तीन चरण दस–दस मिनट के हैं तथा बाकी दो पंद्रह–पंद्रह मिनट के।

सुबह का समय इसके लिए सर्वाधिक उपयोगी है, यूं इसे सांझ के समय भी किया जा सकता है।

प्रथम चरण– दस मिनट : अपनी पूरी शक्ति से तेज और गहरी श्वास लेना शुरू करें। श्वास बिना किसी नियम के, अराजकतापूर्वक– भीतर लें, बाहर छोड़ें। श्वास नाक से लें। श्वास बाहर फेंकने पर अधिक जोर लगाएं, इससे श्वास का भीतर आना सहज हो जाएगा। श्वास का लेना और छोड़ना खूब तीव्रता से और जल्दी–जल्दी करें– और अपनी पूरी ताकत इसमें लगा दें। इसे बढ़ाते ही चले जाएं– आपका पूरा व्यक्तित्व एक तेज श्वास–प्रश्वास ही बन जाए। भीतर ध्यानपूर्वक देखते रहें– श्वास आई, श्वास गई।

दूसरा चरण– दस मिनट : अब पूरी तरह शरीर को गति करने दें तथा आंतरिक भावावेगों को प्रकट होने दें। भीतर से जो कुछ बाहर निकलता हो, उसे बाहर निकलने में सहयोग करें। पूरी तरह से पागल हो जाएं– रोएं, चीखें, चिल्लाएं, नाचें, उछलें, कूदें, हंसें– जो भी होता हो उसे सहयोग करें, उसे तीव्रता दें। चाहें तो तेज और गहरी सांस लेना जारी रख सकते हैं। यदि शरीर की गति और भावों का रेचन और प्रकटीकरण न होता हो, तो चीखना, चिल्लाना, रोना, हंसना इत्यादि में से किसी एक को चुन लें और उसे करना शुरू करें। शीघ्र ही आपके स्वयं के भीतर के संग्रहीत और दमित आवेगों का झरना फूट पड़ेगा।

ख्याल रखें कि आपका मन और आपकी बुद्धि इस प्रक्रिया में बाधक न बने। यदि फिर भी कुछ न होता हो, तो श्वास की चोट जारी रखें और किसी आंतरिक अभिव्यक्ति को प्रकट होने में सहयोग करें।

तीसरा चरण– दस मिनट : अब दोनों बाजू ऊपर उठा लें, पंजों पर खड़े हो जाएं, और एक ही जगह पर उछलते हुए, समग्रता से, पूरी ताकत से महामंत्र हू–हू–हू का उच्चार करें, और उसकी चोट को काम केंद्र पर पड़ने दें। ऊर्जा के बढ़ते हुए प्रवाह को अनुभव करें। 'हू' की चोट को और अधिक तीव्र करते चले जाएं– तथा आनंदपूर्वक इस चरण को तीव्रता के शिखर की ओर ले चलें।

चौथा चरण– पंद्रह मिनट : अचानक सारी गतियां, क्रियाएं और हू–हू–हू की आवाज आदि सब बंद कर दें और शरीर जिस स्थिति में हो, उसे वहीं थिर कर लें। शरीर को किसी भी प्रकार से व्यवस्थित न करें। पूरी तरह से निष्क्रिय और सजग बने रहें। एक गहरी शांति, मौन और शून्यता भीतर घटित होगी।

पांचवां चरण– पंद्रह मिनट : अब भीतर छा गए आनंद, मौन और शांति को अभिव्यक्त करें। आनंद और अहोभाव से भरकर नाचें, गाएं और उत्सव मनाएं। शरीर के रोएं–रोएं से भीतर की जीवन–ऊर्जा और चैतन्य को प्रकट होने दें।

ध्यान रहे, यदि आप ऐसी जगह ध्यान कर रहे हों, जहां पहले तथा दूसरे चरण में भावावेगों के प्रकटीकरण तथा तीसरे चरण में हू–हू–हू की आवाज करने की सुविधा न हो, तो दूसरे चरण में रेचन–क्रिया शारीरिक मुद्राओं द्वारा ही होने दें– तथा तीसरे चरण में 'हू' की आवाज बाहर न करके भीतर ही भीतर करें। लेकिन आवाज करना अधिक श्रेयस्कर है, क्योंकि तब ध्यान अधिक गहरा हो जाता है।

संकोच– लोग क्या कहेंगे?

डाइनेमिक मेडिटेशन के दूसरे चरण में रेचन करना एक पागलपन प्रतीत होता है। इस संबंध में एक साधक का प्रश्न हैः 'यदि घर पर इसे हम जारी रखेंगे, चिल्लाएं या नाचें या हंसें तो आसपास के लोग पागल समझने लगेंगे।' आस–पास के लोग अभी भी पागल ही समझते हैं एक–दूसरे को। कहते न होंगे, यह दूसरी बात है। यह पूरी जमीन करीब–करीब मैड–हाउस है, पागलखाना है। अपने को छोड़कर बाकी सभी लोगों को लोग पागल समझते ही हैं। लेकिन अगर आपने हिम्मत दिखाई और इस प्रयोग को किया, तो आपके पागल होने की संभावना रोज–रोज कम होती चली जाएगी। जो पागलपन को भीतर इकट्ठा करता है, वह कभी पागल हो सकता है। जो पागलपन को उलीच देता है, वह कभी पागल नहीं हो सकता।

फिर एक–दो दिन, चार दिन उत्सुकता लेंगे, चार दिन बाद उत्सुकता कोई लेने को तैयार नहीं है। कोई आदमी दूसरे में इतना उत्सुक नहीं है कि बहुत ज्यादा देर उत्सुकता ले। और आपके चौबीस घंटे के व्यवहार में जो परिवर्तन पड़ेगा, वह भी दिखाई पड़ेगा; आपका रोना–चीखना ही दिखाई नहीं पड़ेगा। आप जब क्रोध में होते हैं तब कभी आपने सोचा कि लोग पागल नहीं समझेंगे? तब आप नहीं सोचते कभी कि लोग पागल समझेंगे कि नहीं।

क्योंकि आप पागल होते ही हैं! लेकिन अगर यह ध्यान का प्रयोग चला तो आपके चौबीस घंटे के जीवन में रूपांतरण हो जाएगा। आपका व्यवहार बदलेगा, आप ज्यादा शांत होंगे, ज्यादा मौन होंगे, ज्यादा प्रेमपूर्ण, ज्यादा करुणापूर्ण होंगे। यह भी लोगों को दिखाई पड़ने लगेगा।

इसलिए घबराएं नहीं, दो–चार दिन उन्हें पागल समझने दें। चार दिन के बाद, आठ दिन के बाद, पंद्रह दिन के बाद आपसे वही लोग पूछने वाले हैं कि यह आपमें जो फर्क हो रहा है, क्या हमें भी हो सकता है?

घबरा गए पब्लिक अपिनियन से कि लोग क्या कहते हैं, ...तब तो बहुत गहरे नहीं जाया जा सकता। हिम्मत करें! और लोग पागल समझते हैं या बुद्धिमान समझते हैं, इससे कितना अंतर पड़ता है? असली सवाल यह है कि आप पागल हैं या नहीं! असली सवाल यह नहीं है कि लोग क्या समझते हैं। अपनी तरफ ध्यान दें कि आपकी क्या हालत है, वह हालत पागल की है या नहीं है! उस हालत को छिपाने से कुछ न होगा। उस हालत को मिटाने की जरूरत है।

फिर यह जो रोना–चीखना, हंसना, नाचना है, यह धीरे–धीरे शांत होता जाएगा। जैसे–जैसे पागलपन बाहर फिंक जाएगा, वैसे–वैसे शांत हो जाएगा। तीन सप्ताह से लेकर तीन महीना–कम से कम तीन सप्ताह, ज्यादा से ज्यादा तीन महीना चल सकता है। जितनी तीव्रता से निकालिएगा उतनी जल्दी चुक जाएगा। प्रत्येक व्यक्ति को थोड़ा अलग–अलग समय लगेगा, क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति के संग्रहीत पागलपन की मात्रा अलग–अलग है। लेकिन जितनी जोर से उलीच देंगे, आप शांत हो जाएंगे। जैसे–जैसे शांत होने लगेंगे, आप चाहेंगे भी तो चीख न सकेंगे, नाच न सकेंगे, रो न सकेंगे, हंस न सकेंगे।

मात्र चाहने से कुछ हो नहीं सकता, भीतर चीज होनी चाहिए निकलने को। और जैसे–जैसे गहराई बढ़ेगी, वैसे–वैसे पहला स्टेप रह जाएगा और चौथा स्टेप रह जाएगा। दूसरा पहले गिर जाएगा। फिर धीरे–धीरे पूछने का भी मन नहीं होगा। पूछना भी बाधा मालूम पड़ेगी कि मैं कौन हूं। तीसरा स्टेप भी गिर जाएगा। (नोट– उस समय तीसरे चरण में 'मैं कौन हूं' पूछा जाता था। चौथे चरण पर ध्यान समाप्त हो जाता था। कुछ वर्ष पश्चात् ओशो ने प्रश्न पूछने के स्थान पर 'हू' मंत्र करने का निर्देश दिया एवं पांचवें चरण में अहोभावपूर्ण नृत्य जोड़ा।) बाद में पहला स्टेप भी मिनट, दो मिनट का रह जाएगा, श्वास ली नहीं कि आप सीधे चौथे स्टेप में चले जाएंगे। अंततः जितनी गहराई पूरी हो जाएगी, उतना दो मिनट के लिए पहला स्टेप रह जाएगा और सीधा चौथा स्टेप आ जाएगा। पूरे चालीस–पचास मिनट आप चौथी अवस्था में ही रह पाएंगे। लेकिन अगर आपने अपनी तरफ से चौथी अवस्था लाने की कोशिश की तो वह कभी नहीं आएगी। प्रथम दो और तीसरे स्टेप से गुजरना ही पड़ेगा। इनके गिर जाने पर ही चौथी अवस्था स्वतः आ जाती है।

–ओशो, ध्यान दर्शन, प्रवचन–7

कुंडलिनी ध्यान –ओशो

यह एक अदभुत् ध्यान–पद्धति है और इसके जरिए मस्तिष्क से हृदय में उतर आना आसान हो जाता है। एक घंटे के इस ध्यान में पंद्रह–पंद्रह मिनट के चार चरण हैं। पहले और दूसरे चरण में आंखें खुलीं रखीं जा सकतीं हैं। लेकिन तीसरे और चौथे चरण में आंखें बंद रखनीं हैं। सांझ इसके लिए सर्वाधिक उपयुक्त समय है।

पहले चरण की संगति सपेरे के बीन–स्वर के साथ बिठायी गयी है। जैसे बीन–स्वर पर सर्प अपनी कुंडलिनी तोड़कर उठता है, और फन निकालकर नाचने लगता है, वैसे ही इस ध्यान के सम्यक् प्रयोग पर साधक की सोई हुई कुंडलिनी शक्ति जाग उठती है।

एक घंटे की अवधि के इस ध्यान के चार चरण हैं, पहले तीन संगीत के साथ और अंतिम चरण बिना संगीत के। कुंडलिनी ध्यान–विधि ऊर्जा–स्नान का कार्य करती है। यह कोमल कंपन से आपको आपकी दिनचर्या के बोझ से मुक्त करके तरोताज़ा कर जाती है।

प्रथम चरण: 15 मिनट

स्वयं को ढीला छोड़ दें और शरीर में कंपन होने दें। अनुभव करें कि ऊर्जा पांवों से ऊपर की ओर बह रही है। जो हो रहा है होने दें और कंपनमात्र हो जायें। आप अपनी आँखें खुली या बंद रख सकते हैं।

दूसरा चरण: 15 मिनट

संगीत की लय पर नाचें– जैसा आपको भाए– और शरीर को, जैसा वह चाहे, गति करने दें।

तीसरा चरण: 15 मिनट

बैठ जाएं या खड़े रहें, लेकिन सीधे और निश्चल। संगीत को सुनें।

चौथा चरण: 15 मिनट

निष्क्रिय होकर लेट जाएं और शांत व साक्षी बने रहें।

‘कंपन होने दें। इसे आरोपित न करें। शांत खड़े रहें, कंपन को आता महसूस करें और जब शरीर कंपने लगे तो उसको सहयोग दें पर उसे स्वयं से न करें। उसका आनंद लें, उससे आह्लादित हों, उसे आने दें, उसे ग्रहण करें, उसका स्वागत करें, परंतु उसकी इच्छा न करें।

यदि आप इसे आरोपित करेंगे तो यह एक व्यायाम बन जायेगा, एक शारीरिक व्यायाम बन जायेगा। फिर कंपन तो होगा लेकिन बस ऊपर–ऊपर, वह तुम्हारे भीतर प्रवेश नहीं करेगा। भीतर आप पाषाण की भांति, चट्टान की भांति ठोस बने रहेंगे, नियंत्रक और कर्ता तो आप हीं रहेंगे, शरीर बस अनुसरण करेगा। प्रश्न शरीर का नहीं है, प्रश्न है आपका। जब मैं कहता हूं कंपो, तो मेरा अर्थ है आपके ठोसपन को और आपके पाषाणवत् प्राणों को जड़ों तक कंप जाना चाहिये ताकि वे जलवत् तरल होकर पिघल सकें, प्रवाहित हो सकें। और जब पाषाणवत् प्राण तरल होंगे तो आपका शरीर अनुसरण करेगा। फिर कंपाना नहीं पड़ता, बस कंपन रह जाता है। फिर कोई उसे करने वाला नहीं है, वह बस हो रहा है। फिर कर्ता नहीं रहा।'

'सुनो भाई साधो' में संत कबीर का पद समझाते हुए सद्‌गुरु ओशो कहते हैं–

दसवें द्वार तारी लागी, अलख पुरुष जाको ध्यान धरै।

कहै कबीर सुनो भाई साधो, अमर होय कबहूं न मरै।।'

दसवें द्वार को जिसने जान लिया, वह अमर हो गया। उसकी फिर कोई मृत्यु नहीं है। धर्म अमृत की खोज है। अमृत दसवें द्वार का अनुभव है। कैसे तुम्हारी ऊर्जा, तुम्हारी जीवन शक्ति, पहले द्वार से उठे और दसवें तक पहुंच जाए––यही सारी ध्यान–विधियों का लक्ष्य है।

यहां हम कुंडलिनी ध्यान का प्रयोग कर रहे हैं। यह ध्यान तुम्हारी ऊर्जा को पहले द्वार से उठा कर दसवें तक ले जाने का मार्ग है। इसलिए पहले दस मिनट तुम शरीर को कंपाते हो। कंपाने का अर्थ है कि जो–जो ऊर्जा जहां–जहां दबी पड़ी है, वह पिघल जाए; जहां–जहां रुकी पड़ी है, वहां–वहां से गतिमान हो जाए। अगर तुमने ठीक से शरीर को दस मिनट संपूर्ण भाव से कंपाया तो सारी दबी हुई ऊर्जा प्रकट हो जाएगी, बहने लगेगी।

फिर दूसरे चरण में नृत्य है। नृत्य का अर्थ है कि जो ऊर्जा अब फैल गई है सब तरफ, वह आनंद भाव से रूपांतरित हो, तुम नाचो; जैसे तुम एक उत्सव में हो; जैसे कोई महा घटना घटी हो; जैसे तुम्हारे जीवन में कोई प्रकाश उतरा! तुम नाचो आनंद भाव से! क्योंकि जितने तुम आनंदित होते हो, उतनी ही ऊर्जा ऊपर उठती है। जितनी ऊर्जा ऊपर उठती है, उतने तुम आनंदित होते हो।

कुंडलिनी का पूरा प्रयोग दसवें द्वार पर टक्कर मारने का है। अगर तुमने ठीक से किया, तो तुम भी कह सकोगेः

जुगत–जुगत की तृषा बुझानी, कर्म–मर्म अध–व्याधि टरै।

कहै कबीर सुनो भाई साधो, अमर होय कबहूं न मरै।।'

लीला ध्यान

–मा अमृत प्रिया

लीला का अर्थ होता है– खेल, नाटक। भगवान कृष्ण को पूर्ण अवतार कहते हैं और उनके जीवन को लीला कहा गया है। यह बात हमारे जीवन के लिए भी उतनी ही सच है। यदि हम भी अकर्ता होकर, साक्षी होकर, परमात्मा की बांसुरी होकर, अहंकार विसर्जित करके जिएं, तो हमारा जीवन भी एक लीला की भांति होगा। हम केवल एक पात्र की तरह जीवन के रंगमंच पर कुशलता से अपना रोल अदा कर पायेंगे।

ओशो से एक बार किसी अभिनेता ने पूछा था कि मैं अपने काम और जीवन में कैसे ज्यादा कुशल हो सकता हूं? ओशो ने एक ही वाक्य में जीवन की कुंजी दे दी और जीवन का रहस्य उजागर कर दिया।

ओशो ने उत्तर दिया– अभिनय ऐसे करो जैसे जीवन हो और जीवन ऐसे जीयो जैसे अभिनय कर रहे हो।

ओशो सदा ही समग्रता से जीवन जीने के पक्षधर रहे हैं लेकिन गंभीरता से नहीं। वे कहते हैं– बी सिन्सियर, बट नॉट सीरियस। पूर्ण निष्ठा के साथ सहजता से जीवन जीना एक बात है और उसे गंभीरता से बोझ की तरह ढोना अलग बात है। जीवन तो एक अनमोल खजाना है परंतु हम अज्ञानतावश दरिद्रता में भटकते रहते हैं।

एक अनूठी स्त्री हुई राबिया, सूफी फकीर थीं। एक सांझ फकीर राबिया को लोगों ने घर के सामने कुछ खोजते देखा। सांझ थीं और सूरज ढल रहा था। लोगों ने सोचा बूढ़ी औरत की सहायता करनी चाहिए, उन्होंने पूछा कि क्या खो गया है तुम्हारा? राबिया बोली कि मेरी सुई खो गयीं है। तो सभी लोग उसके साथ सुई खोजने लगे।

फिर एक आदमी को ख्याल आया कि सुई बड़ी छोटी चीज है, सूरज अब ढला, तब ढला, जल्दी ही अंधेरा हो जाएगा; और छोटी–सी चीज है, इतना बड़ा रास्ता है; कहां गिरी यह ठीक से पता न हो, तो खोजना मुश्किल है; फिर रात भी करीब आती जा रही है। तो उसने पूछा कि राबिया, ठीक से बताओ कि सुई गिरी कहां? स्थान का पता चल जाए तो ठीक से खोज हो सकेगी।

राबिया ने कहा– वह तो तुम न पूछो तो अच्छा है। क्योंकि सुई तो मेरे घर के भीतर गिरी है। वे सब रुक गए जो खोज रहे थे। उन्होंने कहा– पागल औरत! हमें सदा से शक रहा है कि तेरा दिमाग खराब है।

सांसारिक लोगों को संन्यासियों का दिमाग सदा से खराब मालूम पड़ा है। वह उनकी आत्मरक्षा की दृष्टि है। क्योंकि अगर संन्यासी ठीक है, तो फिर तुम पागल हो। बेहतर यही है कि संन्यासी पागल है, ऐसा मानकर चलो। इससे कम से कम अपनी सुरक्षा तो हो जाती है। फिर तुम्हारी भीड़ है। इसलिए तुम जो कहते हो वह भीड़ का वचन है। भीड़ के वचन झूठे हों तो

भी सच मालूम होते हैं।

लोग हंसने लगे। उन्होंने कहा– हमें पहले से ही शक था कि तू पागल है। अब अगर सुई घर के भीतर गिरी है तो बाहर किसलिए खोज रही है? राबिया ने कहा– भीतर अंधेरा है, और मैं गरीब हूं, दीया भी मेरे पास नहीं। बाहर खोज रही हूँ; क्योंकि बाहर अभी सूरज की थोड़ी रोशनी है। और देर मत करो, साथ दो, खोजो, नहीं तो जल्दी ही सूरज भी डूब जाएगा, बाहर भी खोजना मुश्किल हो जाएगा।

उन्होंने कहा कि पागल औरत! बाहर रोशनी है, यह तो हम समझे; लेकिन जब सुई बाहर गुमी ही नहीं, तो रोशनी क्या करेगी? रोशनी सुई थोड़े ही पैदा कर सकती है? राबिया ने कहा कि तुम्हीं बताओ मैं क्या करूं? उन्होंने कहा– यह भी कोई पूछने की बात है? कहीं से भी दीया ले आओ, घर में दीया ले जाओ, या सुबह तक ठहरो, सुबह जब सूरज उगेगा और घर में रोशनी आएगी तब खोज लेना। मगर खोजना तो वहीं होगा जहां खोया है।

राबिया हंसने लगी। उसने कहा कि तुम मुझे पागल समझते हो, लेकिन मैंने वही किया जो तुम कर रहे हो। आनंद तुम खोजते हो बाहर, परमात्मा को भी तुम बाहर खोजते हो। परंतु वह तो तुम्हारे ही अंतरतम में बसा है।

तो अपने भीतर जाकर उस परम सत्ता से पहचान बनाना ही ध्यान है। भीतर निर्विचार अवस्था में ठहरना ही ध्यान है। जिस प्रकार रोज हम शरीर का स्नान करते है वैसे ही ध्यान है अंतर का स्नान। अगर किसान को बीज बोना होता है, तो पहले उसे जमीन की सफाई करनी होती है। वही हमें भी करना है।

बहुत बार हमारे जीवन में खुशी के पल आते हैं और हम हंसना चाहते हैं; लेकिन दूसरे क्या कहेंगे, कभी परिस्थिति अनुकूल नहीं है और अन्य बहुत से कारणों से हम हंस नहीं पाते। हंसी भीतर दमित हो जाती है। ठीक ऐसे ही बहुत बार हमें पीड़ा हुई, चोट पहुंची, दुख हुआ लेकिन रो न सके। दर्द में चीख न सके, चिल्ला न सके। ये सब दमित भावनाएं हमारे भीतर घर किए हुए हैं। और हमारी अंतर्यात्रा में चट्टान का, अवरोध का काम करेंगी। तो भीतर उतरने से पहले इनका निकास जरूरी है। पर इसका यह अर्थ हरगिज न हुआ कि हम दूसरों की परवाह न करते हुए, समाज में मिसफिट की तरह व्यवहार करेंगे। यदि हम दुनिया में हैं तो वहाँ के नियम, तौर तरीकों का पालन करना भी जरूरी है। लेकिन इन भावनाओं का निकास भी उतना ही अनिवार्य है, अपने अंतस की शांति के लिए। नहीं तो इंसान की हालत कुछ ऐसी हो जाती है–

जिंदगी को बोझ जैसे ढो रहा है आदमी,

होना था क्या, क्या हो गया है आदमी!

लीला ध्यान की यह विधि ओशो द्वारा निर्माण की गई मिस्टिक रोज मेडिटेशन पर आधारित है। मिस्टिक रोज मेडिटेशन 21 दिवसीय प्रयोग होता है, जिसमें पहले 7 दिन तीन घंटे रोज हंसना, फिर अगले 7 दिन रोना और अंतिम 7 दिन मौन में रहना होता है।

आज की इस ध्यान विधि के मुख्यतः 7 चरण हैं–

प्रथम चरण– ओंकार का उच्चारण।

दूसरा चरण– हास्य। बच्चों की तरह खिलखिलाकर हंसे। हंसी के फव्वारे बह जाने दें। महसूस करें कि जैसे हंसी आपकी नाभि से छूट रही है। कोई हंसने की घटना याद करें...। पहले झूठी हंसी से शुरू करें फिर हंसी स्वयं फूटने लगेगी। एक मौका दें स्वयं को अभिव्यक्त करने का, पुनः बच्चों जैसे सरल हो जाने का।

तीसरा चरण– रुदन। अक्सर पुरुषों को सिखाया जाता है कि रोना स्त्रियों का काम है। बहादुर लोग रोते नहीं। पर यह बात गलत है, अगर अस्तित्व ऐसा चाहता तो पुरुषों को और महिलाओं को एक जैसी आंसुओं कि ग्रंथि न देता। इन्सान अगर रोए न तो पत्थर जैसा कठोर हो जाता है। अपने दिल पर पड़े हुए पत्थर को हटाएं, भीतर रुके हुए झरने को बह जाने दें। जीवन की किसी दुखद घटना स्मरण करें। कंजूसी छोड़ें। आज अंतिम बार पूरी त्वरा से उसे जी लें, अन्यथा बार–बार चुभता रहेगा यह दर्द।

चौथा चरण– साक्षी। सुख और दुख जीवन में आते हैं और चले जाते हैं। लेकिन जो सदा रहता है वह है इन सुख–दुख का द्रष्टा, साक्षी, चैतन्य। अब इस शाश्वतता के प्रति होश से भरें।

पाँचवा चरण– अहोभाव। नृत्य के द्वारा अपना अहोभाव परम गुरु ओशो के प्रति व्यक्त करें। उनकी करुणा के कारण ही हमें आनंदमय जीवन की कुंजी मिली। धन्यता के अहसास से भरें।

'इक ओशो क्या मिल गए जिंदगी ये नमन हो गई,
जिंदगी एक थी हादसा अब तो चैन–ओ–अमन हो गई।'

नृत्य से हम फैलते हैं। ऊर्जा को ऊपर उठने का अवसर प्राप्त होता है। नृत्य के साथ प्रसन्नता जुड़ी हुई है।

जैसे जैसे ऊर्जा जागकर ऊपर की ओर यात्रा करती है तो मौन में उतरना उतना ही सरल हो जाता है।

शिथिलीकरण एवं आत्मस्मरण– संसारी वह है जिसकी दृष्टि बाहर अटकी हुई है। और साधक वह है जिसकी दृष्टि अंदर मुड़ गई। अब अपने अंतर में रमो।

धीरे–धीरे वापिस आएं। हे प्रभु तेरा लाख लाख शुक्रिया ...इस भाव में डूबते हुए नाचें।

'इक ओशो क्या मिल गए जिंदगी ये नमन हो गई,
जिंदगी एक थी हादसा, अब तो चैन–ओ–अमन हो गई।'

रिबर्थ : पुनर्जन्म ध्यान

–मा अमृत प्रिया

मृत्यु के साक्षात्कार से जीवन अधिक प्रामाणिक हो जाता है। लेकिन हम सदा मृत्यु के तथ्य से बचने की कोशिश करते हैं। और इससे जीवन मिथ्या और कृत्रिम बन जाता है। प्रामाणिक मृत्यु का भी अपना एक सौन्दर्य है, जब कि मिथ्या जीवन मात्र कुरूपता है। मृत्यु का साक्षात्कार किये बिना जीवन को जानने का उपाय नहीं है। जहां भी जीवन है, वहां मृत्यु भी है। ये वास्तव में, एक ही घटना के दो पहलू हैं। और जब कोई यह जान लेता है, वह दोनों का अतिक्रमण कर जाता है। और केवल उसी अतिक्रमण में चेतना समग्ररूपेण खिलती है ...और होता है परम सत्ता का अनुभव।

हज़रत मुहम्मद साहिब हदीस में फरमाते हैं– 'मूतु क़ब्ल अंतमुतु' यानी मरने से पहले मरो।

गुरु अमरदास जी ने भी कहा है– जीविंत मरिए भवजल तरिए।

बड़े बाबा कहते हैं कि सच कहो तो मृत्यु बड़ी आनंददाई है; क्योंकि मृत्यु एक समाधि है।

सद्गुरु मा ओशो प्रिया जी ने परम गुरु ओशो की माताजी 'मा अमृत सरस्वती' की विदाई की घटना कुछ इस तरह बताई, जो एक साधक के लिए बहुत ही प्रेरणादाई है– 'मा अमृत सरस्वती' अस्वस्थ थीं और पूना के हॉस्पिटल में भर्ती थीं। हमलोग (ओशो शैलेन्द्र जी व ओशो प्रिया जी) अमलाई से पूना के लिए रवाना हुए और मा के दर्शन हेतु हॉस्पिटल पहुंचे। हॉस्पिटल में खूब उत्सवमय वातावरण था। मां हंस रही हैं, सबसे बातें कर रही हैं तथा बांये हाथ से खाना खा रही हैं, क्योंकि उनकी दायीं साइड में परैलसिस हो गयी थी। बोलीं कि देखो मेरा बायां हाथ बरकरार है। मा गहन तथाता और अहोभाव में थीं। हम उनका आनंद देखकर आश्चर्यचकित रह गए। हमें नहीं लगा कि हम एक बीमार व्यक्ति से मिलने आए हैं।

बीमारी के दौरान जांच आदि की प्रक्रिया में वह बहुत कष्टपूर्ण हालत में रहीं। मैं दोपहर उनके पास उनकी सेवा–सुश्रूषा के लिए रुकती थी। उनके पैरों को दबाते समय उनके निरंतर बरसते आशीर्वाद से नहा उठती थी। वे मुझसे कहतीं, 'प्रिया तुम ध्यान में डूबो।' उनके पास होना मेरे लिए गहन ध्यान बनने लगा। खूब प्यास पैदा हुई। दो–तीन दिन बाद हॉस्पिटल से घर लौटे। मा नीलम उनसे मिलने के लिए आईं। उन्होंने नीलम को एक स्वरचित गीत सुनाया :

आनंद में जीना सिखाया ओशो ने, आनंद में मरना सिखाया हमें।
नाचो, गाओ, आनंद मनाओ, ध्यान में जीना सिखाया हमें।
हंस–हंस जीना, हंसते हुए मरना, हंसने की कला सिखाई हमें।
हंसते हुए निकले दम, गुरु ओशो को नमन, मरने की कला बताई हमें।

शाम को यही गीत गौतम बुद्ध सभागार में गाने के लिए मां जा रही थीं, तो बोलीं, 'प्रिया तुम इस गीत को गाने में मेरा साथ देना।' देह की इस जर्जर अवस्था में भी वह आनंद, वह उत्सव, वह अहोभाव, वह स्थितप्रज्ञता मेरे लिए अभूतपूर्व थी। मैं उन्हें श्रद्धानत देखती रही। वे कहा करतीं कि ओशो से मेरे तीन नाते हैं। एक पुत्र का, दूसरा गुरु का और तीसरा नाता पिता का है। ओशो मेरे पिता हो गए हैं। उन्होंने मुझे फिर से नया जन्म दिया है।

एक शाम को वह हम सबसे बोलीं कि तुम सब लोग वाइट रोब में चले जाओ, मैं ठीक हूं। मां की आज्ञा शिरोधार्य कर हम सब बुद्धा हॉल में चले गये। कुछ देर बाद ही मित्रों द्वारा खबर मिलने पर हम सब उनके रूम की ओर लगभग दौड़े, तो देखा कि मां जमीन पर लेटी हुई हैं। कहने

लगीं कि अब मुझे हॉस्पिटल नहीं ले जाना। कल 17 मई की सुबह चार बजे मैं चली जाऊंगी। मां शरीर छोड़ने वाली हैं, ऐसा जानकर सभी प्रेमी मित्र उनके रूम में इकट्ठे होने लगे। मां सबसे बोलीं–कीर्तन करो। सब मित्र भावविभोर हो कीर्तन में डूबने लगे। बाद में मां ने सबको मौन बैठने के लिए कहा। सब मौन हो गये। किसी को समय बीतने का पता नहीं लगा। अंत में उन्होंने कहा कि मुझे एकांत में छोड़ दो। कोई एक व्यक्ति यहां मेरे पास बैठे; बाकी सब चले जाएं। मैंने मां के पास बैठना चुना। ओशो शैलेन्द्र जी कमरे के बाहर आंखे बंद कर बैठ गए। अब उनकी सांस की गति बदल गई थी। वे सांस बाहर फेंक रही थीं। शरीर पैरों से ठंडा होना शुरू हो गया। उन्होंने अपने प्रिय पात्र में पानी मांगा। पानी पिया व तरीके से मुंह पोंछा। मैंने पाया कि वह धड़ तक निष्प्राण हो गयी हैं। लेकिन पूरी तरह चैतन्य हैं। शरीर को शांतिपूर्ण और आनंदपूर्ण तरीके से छोड़ने की उनकी पूरी तैयारी है। निकलंक भैया की गोद में जैसे ही उन्होंने अपने प्राण त्यागे, एक आनंदोत्सवमयी ऊर्जा का प्रवाह वातावरण में छा गया। उनकी मृत्यु सुंदर उत्सव थी। सब आनंद में निमग्न थे। सब दिशाओं से मां का आशीर्वाद बरसता हुआ महसूस हो रहा था। संबुद्ध होकर इस पृथ्वी से विदा लेने वालों का जीवन तो फूल जैसा सुंदर होता ही है, उनका महापरिनिर्वाण भी सुगंध का संपूर्ण अस्तित्व में फैल जाना होता है।

ओशो की माताजी की यह घटना इसलिए बताई गई है कि अब तक हमने जिस तरह भी जीवन बिताया, ठीक है। लेकिन इस घटना से हम एक प्रेरणा लें कि हम भी जिएंगे, तो होश से और जाएंगे तो ऐसे ही होश से, अहोभाव से, स्वयं को जानकर।

आज की विधि के मुख्य सात चरण हैं।

पहला चरण–ओंकार।

दूसरा चरण– व्यायाम। एक्सरसाइज द्वारा ऊर्जा को जगाएंगे।

तीसरा चरण–प्राणायाम। तीव्र व गहरी सांस द्वारा जागी हुई ऊर्जा को ऊपर की ओर दिशा देंगे।

चौथा चरण–रेचन। इस उर्ध्वगमन की यात्रा में जो हमारे भीतर दमित भावनाओं की चट्टानें हैं, उनसे अवरोध बनेगा। रेचन द्वारा उन दमित भावों से मुक्त होंगे। हंसना, रोना, चीखना, चिल्लाना या जैसा भी आपका भाव हो, अपने भीतर से समस्त नकारात्मकता को विसर्जित कर दें।

पांचवां चरण–धारणा। इस चरण में आपको अत्यंत सीधे, सरल निर्देश दिए जाएंगे, आपको केवल सहजता से उनका पालन करना है। उस प्रयोग में पूरा–पूरा उतरना है। ध्यान के लिए एक ही अनिवार्य शर्त है– वह है समग्रता। तो पूर्णता से इस विधि में उतरें; ताकि रूपांतरण संभव हो सके।

छठवां चरण–आत्मस्मरण।

सातवां चरण–उत्सव, अहोभाव।

आज जो हमें पुनर्जन्म मिला है वह हम फिर से निरर्थक बातों में उलझकर न गंवाएं। आज से और अभी से जीवन में ध्यान का दीया जलाकर अपने जीवन और मृत्यु दोनों को एक महोत्सव बनाने का प्रयास करें।

संजीवनी ध्यान

–मा अमृत प्रिया

रामायण की कथा हम सबने सुनी है। उसमें एक दृश्य आता है जब मेघनाद का बाण लगने पर लक्ष्मणजी बेहोश होकर गिर पड़ते हैं और उस मूर्च्छा को तोड़ने का केवल एक ही उपाय है, संजीवनी बूटी का सेवन। हनुमानजी इस जड़ी को खोजने हिमालय पर्वत पर जाते हैं।

ठीक उसी तरह हम सब भी आध्यात्मिक रूप से बेहोशी में जी रहे हैं। बहिर्मुखता का बाण हमें लगा हुआ है। आत्मिक बेहोशी का अर्थ है– दूसरों के प्रति होश है, दूसरों का पता चलता है; लेकिन स्वयं से अनजान हैं। अपने प्रति मूर्च्छित हैं। अपने अंतस के ख़ज़ाने से अपरिचित हैं।

इस आध्यात्मिक मूर्च्छा को तोड़ने का उपाय है– ध्यान। ध्यान यानी 'आत्मजागरण', 'स्व–बोध'। ध्यान वह संजीवनी बूटी है जो हमें अंतर्मुखी करके आत्मिक होश से भर देती है। इसलिए इस विधि का नाम संजीवनी ध्यान रखा है। इसमें सात मुख्य चरण हैं।

पहला चरण– तीन बार ओम् का उच्चारण।

दूसरा चरण– जॉगिंग।

प्रगाढ़ होश से भरने के लिए शारीरिक–ऊर्जा उपयोगी होती है। यह ऊर्जा व्यायाम से जगती है, भोजन से बनती है, कार्यकलापों में खर्च होती है और निद्रा में संग्रहीत होती है। आज इसी ऊर्जा को जगाने के लिए हम सर्वप्रथम जॉगिंग करेंगे। जॉगिंग की आवश्यकता है– ताकि सांसें अपने–आप तेज चलने लगें, शरीर ऊष्मा से भर जाए और नाक खुल जाए। इसके बाद प्राणायाम करना ज्यादा आसान होगा।

तीसरा चरण–खड़े होकर तेज़ गहरी श्वास।

ऑक्सीजन की मात्रा जितनी अधिक होगी उतना ही होश सघन होगा। इंगला–पिंगला नाड़ी के माध्यम से उर्जा को सहस्त्रार तक यात्रा करनी है। वह तीव्र श्वास के उपयोग से सरलता से संभव है।

चौथा चरण–बैठकर प्राणायाम।

धीरे–धीरे नाक से श्वास लें। फिर मुंह खोलकर झटके से छोड़ें। पेट पिचकेगा, नाभि अंदर आएगी, ऊर्जा उर्ध्वगामी होगी। इस चरण का संगीत 'ओम जय जगदीश हरे' की लोकप्रिय धुन पर आधारित है। बचपन से हम इसे सुनते आ रहे हैं। इस मधुर धुन को सुनते ही हमारी मनोदशा बदलने लगती है।

पांचवां चरण–उत्सव।

मस्ती से नाचें, गाएं, ताली बजाएं, गैर–गंभीर रहें। कीर्तन के बोल हैं– 'अनहद बाजा बाजे रे, आओ ता–थैया नाचें।'

स्मरण रहे, गंभीरता एक आध्यात्मिक रोग है। प्रसन्नता, उत्सव की भावदशा, आंतरिक स्वास्थ्य है। गंभीर होने से व्यक्ति सिकुड़ता है। उत्सव से ऊर्जा फैलती है। नृत्य में व्यक्ति अपने मुखौटे गिरा देता है और सरल व सहज होकर निर्भार हो जाता है। ध्यान को कोई कर्मकांड नहीं बनाना, बल्कि एक हार्दिकता, प्रफुल्लता के भाव से जोड़ना है।

छटवां चरण– शिथिलीकरण।

शरीर, मन और श्वास को सुझाव दें ... शांत होने का, ...शिथिल होने का। वे आपका निवेदन मानेंगे। प्रार्थनापूर्ण भाव से कहें। ऐसे शिथिल हो जाएं जैसे नींद में, किंतु ऐसे जागे रहें जैसे किसी खतरे में। ध्यान और निद्रा में थोड़ा–सा ही भेद है। सामान्यतः चेतना की तीन अवस्थाओं से हम परिचित हैं।

1. जागृति– होश एवं शब्दात्मक विचार।

2. स्वप्न– बेहोशी एवं चित्रात्मक विचार।

3. सुषुप्ति– बेहोशी एवं निर्विचार, स्वप्नरहित निद्रा।

4. ध्यान है चौथी अवस्था, तुरीय– जहाँ होश एवं निर्विचार का संयोग घटित होता है।

सातवां चरण– आत्मस्मरण।

पहले 6 चरण तक हमारा प्रयास है। अब अस्तित्व का प्रसाद बरसने दें। अब सारी क्रियाएं छोड़ दें। बस ग्रहणशील बनें। अवेलबल रहें।

पहले छः चरण तक प्रयास था। वहाँ तक विधि थी। असली ध्यान निष्क्रिय जागरूकता है– विश्रामपूर्ण अपना ख्याल। अपने तन–मन को स्वयं के घर की भांति महसूस करें... जैसे शरीर दीवार का बाहरी रूप है। और मन उसी दीवार का आंतरिक हिस्सा है। अब दीवारों से घिरे भीतर के खाली आकाश को जानें। उससे नाता जोड़ें। उसकी याद से भरें। यह शून्यता का अहसास– यही हमारा वास्तविक स्वरूप है। यहीं चिर–शान्ति है, स्थिरता है। इस अनुभव में डूबें।

ध्यान यानी कुछ नहीं करना
–ओशो

स्मरण रहे कि ध्यान पैसिव रिलैक्स्ट अवेयरनेस है– तनावरहित निष्क्रिय सजगता। जो क्रियाएं हम करेंगे, वे केवल ध्यान की दशा तक पहुंचने के लिए भूमिका निर्मित करेंगी। क्रिया को ध्यान न समझ लेना। सुनो जापान की यह झेन (ज़ैन) कहानी–

झेन मोनेस्ट्री में पधारे एक आगंतुक ने पूछा, 'आप लोग यहां क्या करते हो?'

सद्गुरु ने कहा, 'हम कुछ नहीं करते'।

वे टहल रहे थे। आगंतुक ने एक संन्यासी को कपड़े धोते देखा और पूछा, 'आप तो कह रहे थे कि आपलोग यहां कुछ नहीं करते!'

सद्गुरु ने कहा, 'कपड़ों की धुलाई ज़रूरी है। यह संन्यासी उन्हें फिर से पहनने के लायक बना रहा है; ताकि ठंड के इस मौसम में गर्म वस्त्र धारण कर हम थोड़ी देर 'कुछ नहीं' कर पाएं।' वे चलते रहे और रसोई के सामने से गुजरे। आगंतुक ने पूछा, 'कोई खाना बना रहा है। लेकिन आप तो कह रहे थे कि यहां कुछ नहीं होता!'

सद्गुरु ने कहा, 'खाना बनाना भी ज़रूरी है, अन्यथा हम भूखे ही रह जायेंगे। ये संन्यासी भोजन को परोसे जाने लायक बना रहे हैं, ताकि हम खा–पीकर थोड़ी देर 'कुछ नहीं' कर पाएं।' आश्रम के मध्य में बड़ा हॉल था, जहां बहुतेरे भिक्षु आंख बंद किए चुपचाप बैठे थे। मेहमान ने सवाल किया– 'क्या ये लोग ध्यान कर रहे हैं?'

सद्गुरु ने इशारा किया– 'नहीं, ये लोग कुछ नहीं कर रहे हैं।'

'क्या आप ध्यान करने को ही 'कुछ नहीं करना' कह रहे हैं? सीधा–सीधा ध्यान करना क्यों नहीं कहते?'– सत्र की समाप्ति पर आगंतुक ने कहा– 'क्या आपको मेरे बार–बार प्रश्न पूछने से असुविधा हुई?' सद्गुरु ने कहा, 'ध्यान क्रिया नहीं, बल्कि अक्रिया है। तुम करने की भाषा में पूछते हो तो मैंने करने की भाषा में ही जवाब दिया। तुम्हारा प्रश्न पूछना ज़रूरी है। मेरा उत्तर देना भी। तुम आतंरिक शांति को खोज रहे हो, जहां थोड़ी देर 'कुछ नहीं' करने की स्थिति में रमण कर सको। गहन नींद में भी हम उसी शांत दशा में पहुंचते हैं किंतु बेहोश, इसलिए वह स्थिति क्या है, उसका ज्ञान नहीं हो पाता। ध्यान में होशपूर्ण होने से आत्मज्ञान घटित होता है।'

अंततः अहोभाव के संग ध्यान से वापस लौटें। शान्ति का यह स्वाद हमें मिला, परमगुरु ओशो की करुणा को महसूस करें। समस्त जगत के प्रति, प्रभु के प्रति, आनंद की इस झलक के प्रति, धन्यवाद भाव से भरें। दोनों हाथ जोड़कर कृतज्ञता महसूस करें। उत्सव मनाएं। संगीत आर नृत्य के साथ अपने अंतस के अहोभाव को अभिव्यक्त करें।

फलित हुई जीवंतता को अपनी दिनचर्या में फैलने दें। ध्यान की यह सुगंध चौबीस घंटों में व्याप्त हो जाए। धीरे–धीरे आप एक नए ही व्यक्ति बन जाएंगे– ज्यादा सजग, स्व–बोध से भरे, प्रेम से ओतप्रोत... एक शांत, प्रफुल्लित व्यक्ति।

नृत्य को भी ध्यान बना लो –ओशो

नर्तक को, अहंकार के केंद्र को, भूल जाओ; नृत्य ही हो रहो। यही ध्यान है। इतनी गहनता से नाचो कि तुम यह बिल्कुल भूल जाओ कि 'तुम' नाच रहे हो और यह महसूस होने लगे कि 'तुम' नृत्य ही हो। यह 'दो' का भेद मिट जाना चाहिए; फिर यह ध्यान बन जाता है। यदि भेद बना रहे, तो फिर वह एक व्यायाम ही है; अच्छा है, स्वास्थ्यकर है, लेकिन उसे आध्यात्मिक नहीं कहा जा सकता। वह बस एक साधारण नृत्य ही हुआ। नृत्य स्वयं में अच्छा है– जहां तक चलता है, अच्छा ही है। उसके बाद तुम ताजे और युवा महसूस करोगे। परंतु वह अभी ध्यान नहीं बना। नर्तक को विदा करते रहना होगा, जब तक कि केवल नृत्य ही न बचे।

तो क्या करना है? नृत्य में समग्र होओ क्योंकि 'नर्तक' और 'नृत्य' में भेद तभी तक रह सकता है जब तक तुम उसमें समग्र नहीं हो।

यदि तुम एक ओर खड़े रहकर अपने नृत्य को देखते रहते हो, तो भेद बना रहेगा; तुम नर्तक हो और तुम नृत्य कर रहे हो। फिर नृत्य एक कृत्य मात्र होता है, जो तुम कर रहे हो; वह तुम्हारा प्राण नहीं है। तो पूर्णतया उसमें संलग्न हो जाओ, लीन हो जाओ। एक ओर न खड़े रहो, एक दर्शक मत बने रहो। सम्मिलित होओ।

– ओशो, ध्यानयोग प्रथम और अंतिम मुक्ति

नटराज ध्यान –ओशो

नटराज ध्यान के संबंध में बोलते हुए ओशो ने कहा– परमात्मा को हमने नटराज की भांति सोचा है। हमने शिव की एक प्रतिमा भी बनाई है नटराज के रूप में। परमात्मा नर्तक की भांति है, एक कवि या चित्रकार की भांति नहीं। एक कविता या पेंटिंग बनकर कवि से, पेंटर से अलग हो जाती है; लेकिन नृत्य को नर्तक से अलग नहीं किया जा सकता। उनका अस्तित्व एक साथ है, कहना चाहिए एक है।

नृत्य और नर्तक एक हैं। नृत्य के रुकते ही नर्तक भी विदा हो जाता है। संपूर्ण अस्तित्व ही परमात्मा का नृत्य है; अणु–परमाणु नृत्य में लीन हैं। परमात्म–ऊर्जा अनंत–अनंत रूपों में, अनंत–अनंत भाव–भंगिमाओं में नृत्य कर रही है।

नटराज–नृत्य एक संपूर्ण ध्यान है। नृत्य में डूबकर व्यक्ति विसर्जित हो जाता है और अस्तित्व का नृत्य ही शेष रह जाता है। हृदयपूर्वक पागल होकर नाचने में जीवन रूपांतरण

की कुंजी है।

नटराज ध्यान पैंसठ मिनट का है और इसके तीन चरण हैं। पहला चरण चालीस, दूसरा चरण बीस और तीसरा चरण पांच मिनट का है। जिस समय आप चाहें, इसे कर सकते हैं।

पहला चरण

संगीत की लय के साथ–साथ नाचें और नाचें, बस नाचें, पूरे अचेतन को उभरकर नृत्य में प्रवेश करने दें। ऐसे नाचें कि नृत्य के वशीभूत हो जाएं। कोई योजना न करें, और न ही नृत्य को नियंत्रित करें। नृत्य में साक्षी को, द्रष्टा को, बोध को– सबको भूल जाएं। नृत्य में पूरी तरह डूब जाएं, खो जाएं, समा जाएं– बस, नृत्य ही हो जाएं।

काम केंद्र से शुरू होकर ऊर्जा ऊपर की ओर गति करेगी।

दूसरा चरण

वाद्य–संगीत के बंद होते ही नाचना रोक दें और लेट जाएं। अब नृत्य एवं संगीत से पैदा हुई सिहरन को अपने सूक्ष्म तलों तक प्रवेश करने दें।

तीसरा चरण

खड़े हो जाएं। पुनः पांच मिनट नाचकर उत्सव मनाएं– प्रमुदित हों।

सूफी दरवेश नृत्य –ओशो

यह एक प्राचीन सूफी विधि है, जो हमें चैतन्य साक्षी में केंद्रित करती है। इस विधि की शांत, मद्धिम, संगीतपूर्ण, लयबद्ध स्वप्निलता हमें अपने आत्म–स्रोत को अनुभव करने में विशेष सहयोगी है।

लंबे समय तक शरीर के गोल घूमने से चेतना का तादात्म्य शरीर से टूट जाता है– शरीर तो घूमता रहता है, परंतु भीतर एक अकंप, अचल चैतन्य का बोध स्पष्ट होता चला जाता है।

इस प्रयोग को शुरू करने से तीन घंटे पूर्व तक किसी भी प्रकार का आहार या पेय नहीं लेना चाहिए, ताकि पेट हल्का और खाली हो।

शरीर पर ढीले वस्त्र रहें, तथा पैर में जूते या चप्पल न हों तो ज्यादा अच्छा है।

इसके लिए समय का कोई बंधन नहीं है, आप घंटों इसे कर सकते हैं।

सूर्यास्त के पहले का समय इस प्रयोग के लिए सर्वोत्तम है। यह केवल दो चरणों का ध्यान है।

पहला चरण : अपनी जगह बना लें जहां आपको घूमना है। आंखें खुली रहेंगी। अब दाहिने हाथ को ऊपर उठा लें– कंधों के बराबर ऊंचाई तक, और उसकी खुली हथेली को आकाशोन्मुख रखें।

फिर बाएं हाथ को उठाकर नीचे इस तरह से झुका लें कि हथेली जमीन की ओर उन्मुख रहे। दायीं हथेली से ऊर्जा आकाश से ली जाएगी और बायीं हथेली से पृथ्वी को लौटा दी जाएगी।

अब इसी मुद्रा में एंटि–क्लॉकवाइज़– यानी दाएं से बाएं– लट्टू की तरह गोल घूमना शुरू करें। यदि एंटि–क्लॉकवाइज़ घूमने में कठिनाई महसूस हो, तो क्लॉकवाइज़– यानी बाएं से दाएं घूमें। घूमते समय शरीर और हाथ ढीले हों– तने हुए न हों। धीमे–धीमे शुरू कर गति को लगातार बढ़ाते जाएं– जब तक कि गति आपको पूरा ही न पकड़ ले।

गति के बढ़ाने से चारों ओर की वस्तुएं और पूरा दृश्य अस्पष्ट होने लगेगा, तब आंखों से उन्हें पहचानना छोड़ दें, और उन्हें और अधिक अस्पष्ट होने में सहयोग दें। वस्तुओं, वृक्षों और व्यक्तियों की जगह एक प्रारंभहीन और अंतहीन वर्तुलाकार प्रवाहमात्र रह जाए।

घूमते समय ऐसा अनुभव करें कि पूरी घटना का केंद्र नाभि है और सबकुछ नाभि के चारों ओर हो रहा है। इसमें किसी प्रकार की आवाज या भावावेगों का रेचन, कथार्सिस न करें। जब आपको लगे कि अब आप और नहीं घूम सकते, तो इतनी तेजी से घूमें कि आपका शरीर और आगे घूमने में असमर्थ होकर आप ही जमीन पर गिर पड़े। याद रहे, भूलकर भी व्यवस्था से न गिरें। यदि आपका शरीर ढीला होगा, तो जमीन पर गिरना भी हल्के से हो जाएगा और किसी प्रकार की चोट नहीं लगेगी। मन का कहना मानकर शरीर को समय से पहले न गिरने दें।

दूसरा चरण : गिरते ही पेट के बल लेट जाएं, ताकि आपकी खुली हुई नाभि का स्पर्श पृथ्वी से हो सके। यदि पेट के बल लेटने में अड़चन होती हो, तो पीठ के बल लेटें। पूरे शरीर का, नाभि सहित, पृथ्वी से स्पर्श होने दें। पृथ्वी से एक छोटे बच्चे की भांति चिपक जाएं और उन दिनों की अनुभूतियों की पुनरुज्जीवित कर लें, जब आप छोटी उम्र में अपनी मां की छाती से चिपके रहा करते थे। अब आंखें बंद कर लें, और शांत और शून्य होकर इस स्थिति में कम–से–कम पंद्रह मिनट तक पड़े रहें। अनुभव करें कि नाभि के माध्यम से आप पृथ्वी से एक हो गए हैं– व्यक्ति विसर्जित हो गया है विराट में; व्यक्ति मिट गया है और समष्टि ही रह गई है।

कीर्तन ध्यान (संगीत मंडली के संग)

–ओशो

कीर्तन अवसर है, अस्तित्व के प्रति अपने आनंद और अहोभाव को निवेदित करने का। उसकी कृपा से जो जीवन मिला, जो आनंद और चैतन्य मिला, उसके लिए अस्तित्व के प्रति हमारे हृदय में जो प्रेम और धन्यवाद का भाव है, उसे हमें कीर्तन में नाचकर, गाकर, उसके नाम–स्मरण की धुन में मस्ती में थिरककर अभिव्यक्त करते हैं।

कीर्तन उत्सव है– भक्तिभाव से भरे हुए हृदय का। व्यक्ति की भावऊर्जा का समूह, भाव–ऊर्जा में विसर्जित होने का अवसर है कीर्तन।

इस प्रयोग में शरीर पर कम और ढीले वस्त्रों का होना तथा पेट का खाली होना बहुत सहयोगी है।

कीर्तन ध्यान एक घंटे का उत्सव है, जिसके पंद्रह–पंद्रह मिनट के चार चरण हैं।

संध्या का समय इसके लिए सर्वोत्तम है।

पहला चरण : पहले चरण में कीर्तन–मंडली संगीत के साथ एक धुन गाती है– जैसे 'गोविंद बोलो हरि गोपाल बोलो, राधा रमण हरि गोपाल बोलो।'

इस धुन को पुनः गाते हुए आप नृत्यमग्न हो जाएं। धुन और संगीत में पूरे भाव से डूबें, और अपने शरीर और भावों को बिना किसी सचेतन व्यवस्था के थिरकने तथा नाचने दें। नृत्य और धुन की लयबद्धता में अपनी भावऊर्जा को सघनता और गहराई की ओर विकसित करें।

दूसरा चरण : दूसरे चरण में धुन का गायन बंद हो जाता है, लेकिन संगीत और नृत्य जारी रहता है।

अब संगीत की तरंगों से एकरस होकर नृत्य जारी रखें। भावावेगों एवं आंतरिक प्रेरणाओं को, बच्चों की तरह निःसंकोच होकर, पूरी तरह से अभिव्यक्त होने दें।

तीसरा चरण : तीसरा चरण पूर्ण मौन और निष्क्रियता का है।

संगीत के बंद होते ही आप अचानक रुक जाएं। समस्त क्रियाएं बंद कर दें और विश्राम में डूब जाएं। जाग्रत हुई भावऊर्जा को भीतर ही भीतर काम करने दें।

चौथा चरण : चौथा चरण पूरे उत्सव की पूर्णाहुति का है।

पुनः शुरू हो गए मधुर संगीत के साथ आप अपने आनंद, अहोभाव और धन्यवाद के भाव को नाचकर पूरी तरह से अभिव्यक्त करें।

कीर्तन ध्यान (संगीत सी.डी. के संग)

–मा अमृत प्रिया

परमगुरु ओशो कहते हैं–

उत्सव आमार जाति, आनंद आमार गोत्र।

मैं गीत सिखाता हूं, मैं संगीत सिखाता हूं,

मेरा संदेश एक ही हैः उत्सव–महोत्सव।

उत्सव–महोत्सव को सिद्धांत बनाकर नहीं समझा जा सकता, उत्सव तो केवल जिया जा सकता है, पिया जा सकता है। जब भी कोई सदगुरु देह त्याग करता है, तो अपने शिष्यों को एक वादा दे जाता है कि कैसे विदेही अवस्था में वे अपने सद्‌गुरु से जुड़ पाएंगे। ऐसा ही एक वादा ओशो ने देह छोड़ने के कुछ माह पूर्व अपने प्यारे संन्यासियों को दिया कि जब भी मेरे कम से कम पांच संन्यासी श्वेत वस्त्रों में संध्या के समय, ध्यानमय व उत्सवपूर्ण वातावरण में एकत्रित होंगे, तो मेरी उपस्थिति अवश्य ही अनुभव करेंगे। यह वादा था एक सद्‌गुरु का उसके शिष्यों से ... तब से लेकर आज तक प्रतिदिन संध्या की बेला में साधक सफेद वस्त्रों में उत्सव व कीर्तन में नहा जाते हैं; प्रेम से, प्यास से, अश्रुओं से, भाव से ओशो को पुकारते हैं। अब ये अपनी–अपनी संवेदनशीलता की बात है कि उनकी उपस्थिति को कौन कितना पीता है।

वैसे तो भारत की बहुत ही प्राचीन परंपरा है कीर्तन। अनेक संतों ने नाचकर, गाकर, उस प्रभु को पाया है जैसे मीराबाई, चैतन्य महाप्रभु आदि। सिक्ख गुरुओं ने भी शबद कीर्तन द्वारा उसकी महिमा का गुणगान किया है। भारत में तो परमात्मा के एक रूप को ही नटराज कहा गया है। परंतु ओशो ने केवल इतना किया कि कीर्तन को, नृत्य को होश के साथ जोड़ दिया; आत्मस्मरण के साथ जोड़ दिया ताकि बाहर के कीर्तन को पकड़कर धीरे–धीरे हम भीतर के अखण्ड कीर्तन तक पहुँच सकें। यही कीर्तन, यही नृत्य, द्वार बन सकता है।

परमगुरु ओशो अपने प्रवचनों में एक बड़ी प्यारी कथा सुनाते हैंः–

नारद स्वर्ग जा रहे हैं। और उन्होंने एक बूढ़े संन्यासी को पूछा, कुछ खबर–वबर तो नहीं लानी है परमात्मा से? तो उस बूढ़े संन्यासी ने कहा कि परमात्मा से मिलना हो तो ज़रा पूछ लेना कि कितनी देर और है? क्योंकि मैं तीन जन्मों से साधना कर रहा हूं।

वह बड़ा पुराना तपस्वी था। नारद ने कहा, जरूर पूछ लूंगा।

उसके ही पास एक दूसरे वृक्ष के नीचे एक जवान युवक बैठा हुआ अपना इकतारा बजा रहा था। गीत गा रहा था। नारद ने ऐसे ही मजाक में उससे भी पूछ लिया कि क्यों भाई, तुम्हें भी तो कोई बात नहीं पूछनी है भगवान से? मैं जा रहा हूं स्वर्ग।

वह अपना गीत ही गाता रहा। उसने नारद की तरफ आंख उठाकर भी न देखा। नारद ने उसको हिलाया तो उसने कहा कि नहीं, उसकी कृपा अपरंपार है। जो चाहिए वह मुझे हमेशा मिला ही हुआ है। कुछ पूछना नहीं है। मेरी तरफ से उसे कोई तकलीफ मत देना। मेरी बात ही मत उठाना, मैं राजी हूं। और सभी मिला हुआ है। बन सके तो मेरी तरफ से धन्यवाद दे देना।

नारद वापस लौटे। उन्होंने उस बूढ़े संन्यासी को जाकर कहा कि क्षमा करना भाई! मैंने पूछा था, उन्होंने कहा कि वह बूढ़ा संन्यासी जिस वृक्ष के नीचे बैठा है, उसमें जितने पत्ते हैं, उतने ही जन्म अभी और लगेंगे। बूढ़ा तो बहुत नाराज हो गया। वह जो पोथी पढ़ रहा था फेंक दी, माला तोड़ दी, गुस्से में चिल्लाया कि हद हो गई! अन्याय है। यह कैसा न्याय? तीन जन्म से तप रहा हूं, कष्ट पा रहा हूं, उपवास कर रहा हूं, अभी और इतने? यह नहीं हो सकता।

उस युवक के पास भी जाकर नारद ने कहा कि मैंने पूछा था, तुमने नहीं चाहा था फिर भी मैंने पूछा। उन्होंने कहा कि वह जिस वृक्ष के नीचे बैठा है, उसमें जितने पत्ते हैं उतने ही जन्म और... वह युवक तत्क्षण उठा, अपना इकतारा लेकर नाचने लगा और उसने कहा, गजब हो गया। मेरी इतनी पात्रता कहां? इतनी जल्दी? जमीन पर कितने जंगल हैं, कितने वृक्ष हैं, उन वृक्षों में कितने पत्ते हैं, ओह... सिर्फ इस वृक्ष के पत्ते? इतने ही जन्मों में हो जाएगा? यह तो बहुत जल्दी हो गया, यह मेरी पात्रता से बहुत ज्यादा है। इसको मैं कैसे झेल पाऊंगा? इस अनुग्रह को मैं कैसे प्रगट कर पाऊंगा?

वह नाचने लगा खुशी में। और कहानी कहती है, वह उसी तरह नाचते-नाचते समाधि को उपलब्ध हो गया। उसका शरीर छूट गया। जो अनंत जन्मों में होने को था, वह उसी क्षण हो गया।

यही धन्यता, कृतज्ञता भरा जीवन ही तो असली धार्मिकता है।

ओशो कहते हैं जो जन्मों जन्मों में नहीं हो सका वह क्षण भर में हो सकता है... केवल पुकार चाहिए, प्यास चाहिए।

अतः यह नृत्य, कीर्तन, प्रभु का गुणगान- अभिव्यक्ति है आनंद की, अहोभाव की। तो आइए हम भी उस भक्त की तरह हो जाएं। अहोभाव से भरकर नाचें-गाएं।

आज की इस विधि में मुख्यतः तीन ही चरण हैं -

प्रथम चरण : गुरु वंदना।

दूसरा चरण : कीर्तन।

तीसरा चरण : आत्मस्मरण।

अहोभाव से भरे हुए, जीवन के इन सुंदर क्षणों हेतु प्रभु का लाख-लाख धन्यवाद करें।

प्रार्थना ध्यान –ओशो

प्रार्थना एक भावदशा है– निसर्ग के साथ बहने की, एक होने की प्रक्रिया है। यदि प्रार्थना में तुम बोलना चाहो तो बोल सकते हो, लेकिन याद रहे कि तुम्हारी बातचीत अस्तित्व को प्रभावित नहीं करने जा रही है, वह तुम्हें प्रभावित करेगी। तुम्हारी प्रार्थना परमात्मा के मन को बदलने वाली नहीं है, वह तुम्हें बेशक बदल सकती है। और अगर वह तुम्हें नहीं बदलती है तो समझो कि वह मन की एक चालाकी भर है। यह विराट आकाश तुम्हारे साथ होगा, यदि तुम उसके साथ हो सको। इसके अतिरिक्त प्रार्थना का कोई दूसरा ढंग नहीं है। मैं प्रार्थना करने को कहता हूं– लेकिन यह ऊर्जा आधारित घटना हो, न कि कोई भक्ति की बात।

पहला चरण : तुम चुप हो जाओ, तुम अपने को खोल भर लो। दोनों हाथ सामने की ओर उठा लो। हथेलियां आकाशोन्मुख हों और सिर सीधा उठा हुआ रहे। और तब अनुभव करो कि अस्तित्व तुममें प्रवाहित हो रहा है।

जैसे ही ऊर्जा या प्राण तुम्हारी बांहों से होकर नीचे की ओर बहेगा, वैसे ही तुम्हें हल्के–हल्के कंपन का अनुभव होगा।

तब तुम हवा में कंपते हुए पत्ते की भांति हो जाओ। शरीर को ऊर्जा से झनझना जाने दो– और जो भी होता हो, उसे होने दो। उसे पूरा सहयोग करो।

दूसरा चरण : दो या तीन मिनट के बाद– या जब भी तुम पूरी तरह भरे हुए अनुभव करो, तब तुम आगे झुक जाओ और माथे को पृथ्वी से लगा लो।

दोनों हाथ सिर के आगे पूरे फैले रहेंगे और हथेलियां भी पृथ्वी को स्पर्श करेंगी।

पृथ्वी की ऊर्जा के साथ दिव्य–ऊर्जा के मिलन के लिए तुम वाहन बन जाओ। अब पृथ्वी के साथ प्रवाहित होने का, बहने का अनुभव करो। अनुभव करो कि पृथ्वी और स्वर्ग, ऊपर और नीचे, यिन और यांग, पुरुष और नारी– सब एक महा–आलिंगन में आबद्ध हैं। तुम बहो, तुम घुलो। अपने को पूरी तरह छोड़ दो और सर्व में निमज्जित हो जाओ।

दोनों चरणों को छह बार और दुहराओ, ताकि सभी सात चक्रों तक ऊर्जा गति कर सके।

इन्हें अधिक बार भी दुहराया जा सकता है, लेकिन सात से कम पर छोड़ा तो बेचैनी अनुभव होगी– रात में न सो सकोगे।

अच्छा हो कि यह प्रार्थना रात में करो। प्रार्थना के समय कमरे में अंधेरा कर लो

और उसके बाद तुरंत सो जाओ।

सुबह भी इसे किया जा सकता है, लेकिन तब अंत में पंद्रह मिनट का विश्राम आवश्यक हो जाएगा। अन्यथा तुम्हें लगेगा कि तुम तंद्रा में हो, नशे में हो। यह ऊर्जा में निमज्जित प्रार्थना है। यह प्रार्थना तुम्हें बदलेगी। और तुम्हारे बदलने के साथ ही अस्तित्व भी बदल जाएगा।

सामूहिक प्रार्थना ध्यान

–ओशो

सामूहिक प्रार्थना ध्यान के लिए कम–से–कम तीन व्यक्ति होने चाहिएँ। बड़ी संख्या के साथ करना अधिक श्रेयस्कर है। और संध्या का समय सर्वाधिक उपयुक्त है इसके लिए।

पहला चरण :

एक घेरे में खड़े हो जाएं, आंखें बंद कर लें और अगल–बगल के मित्रों के हाथ अपने हाथ में ले लें। फिर धीरे–धीरे, लेकिन आनंदपूर्वक और तेज स्वर में ओम्– ऐसा उच्चार शुरू करें। बीच–बीच में, उच्चार के अंतराल के बीच एक मौन की घड़ी को प्रविष्ट होने दें। अपनी और अपने परिवेश की दिव्यता और पूर्णता का अनुभव करें और अपने अहंकार को घुलकर उच्चार में निमज्जित हो जाने दें।

जिनके पास आंखें हैं, वे देखेंगे कि समूह के बीच से ऊर्जा का एक स्तंभ ऊपर उठ रहा है। कोई अकेला आदमी बहुत–कुछ नहीं कर सकता है– लेकिन यदि पांच सौ व्यक्ति सम्मिलित होकर इस प्रार्थना में योग दें, तो इसकी बात ही कुछ और है।

दूसरा चरण :

दस मिनट के बाद, समूह के नेता के इशारे पर जब हाथ से हाथ छूटकर नीचे आ जाएं, तब सभी लोग जमीन पर झुक जाएं और पृथ्वी को प्रणाम करें, और ऊर्जा को पृथ्वी में प्रविष्ट हो जाने दें।

नादब्रह्म ध्यान –ओशो

तिब्बत देश की यह बहुत पुरानी विधि है। बड़े भोर में, दो और चार बजे के बीच उठकर, साधक इस विधि का अभ्यास करते थे और फिर सो जाते थे। ओशो का कहना है कि हमलोग नादब्रह्म ध्यान सोने के पूर्व मध्य–रात्रि में करें या फिर प्रातःकाल के समय करें।

ध्यान रहे कि रात के अतिरिक्त जब भी इसे किया जाए, तब अंत में पंद्रह मिनट का विश्राम अनिवार्य है।

नादब्रह्म ध्यान, सामूहिक और व्यक्तिगत, दोनों ढंग से किया जा सकता है। पेट भरे रहने पर यह ध्यान नहीं करना चाहिए, क्योंकि तब आंतरिक नाद गहरा नहीं जाएगा। यदि इसे अकेले करें तो कान में रुई या डाट (इयर प्लग) लगाना उपयोगी होगा।

यह ध्यान तीन चरणों का है। पहला चरण तीस मिनट का है, और दूसरा तथा तीसरा पंद्रह–पंद्रह मिनट का। आंखें पूरे समय बंद रहेंगी।

पहला चरण

आंखें बंद करके सुखपूर्वक बैठ जाएं। अब मुंह को बंद रखते हुए, भीतर ही भीतर, भंवरे की गुंजार की भांति 'हूं ऊं ऊं ऊं ऊं' का नाद शुरू करें। यह नाद इतने जोर से शुरू करें कि इसका कंपन आपको पूरे शरीर में अनुभव हो। नाद इतना ऊंचा हो कि आसपास के लोग इसे सुन सकें। नाद के स्वर–मान में आप बदलाहट भी कर सकते हैं। अपने ढंग से गुंजार करें। फिर श्वास भीतर ले जाएं।

अगर शरीर हिलना चाहे तो उसे हिलने दें, लेकिन गति अत्यंत धीमी और प्रसादपूर्ण हो। नाद करते हुए भाव करें कि आपका शरीर बांस की खाली पोंगरी है, जो सिर्फ गुंजार के कंपनों से भरी है। कुछ समय के बाद वह बिंदु आएगा जब आप श्रोता भर रहेंगे और नाद आप ही आप गूंजता रहेगा।

यह नाद मस्तिष्क के एक–एक तंतु को शुद्ध कर उन्हें सक्रिय करता है तथा प्रभु–चिकित्सा (डिवाइन हीलिंग) में विशेष लाभकारी है।

इसे तीस मिनट से अधिक तो कर सकते हैं, लेकिन कम नहीं।

दूसरा चरण

अब दोनों हाथों को अपने सामने नाभि के पास रखें और हथेलियों को आकाशोन्मुख ऊपर की ओर। अब दोनों हाथों को आगे की तरफ ले जाते हुए चक्राकार घुमाएं। दायां हाथ दायीं तरफ को जाएगा और बायां हाथ बायीं तरफ को। और तब वर्तुल पूरा करते हुए दोनों हाथों को अपने सामने उसी स्थान पर वापस ले आएं।

ध्यान रहे कि जितना हो सके हाथों के घूमने की गति धीमी से धीमी रखनी है। वह इतनी धीमी रहे कि लगे कि जैसे गति ही नहीं हो रही है। शरीर हिलना चाहे तो उसे हिलने दें, लेकिन उसकी गति भी बहुत धीमी, मृदु और प्रसादपूर्ण हो। और भाव करें कि ऊर्जा आप से बाहर जा रही है। यह क्रम साढ़े सात मिनट तक चलेगा।

इसके बाद हथेलियों को नीचे की ओर, जमीन की ओर उलट दें और हाथों को विपरीत दिशा में घुमाना शुरू करें।

पहले तो सामने रखे हुए हाथों को अपने शरीर की तरफ आने दें और फिर उसी प्रकार दाएं हाथ को दायीं तरफ तथा बाएं हाथ को बायीं तरफ वर्तुलाकार गति करने दें, जब तक कि वे वापस उसी स्थान पर सामने न आ जाएं।

घूमने के लिए हाथों को अपने आप न छोड़ें, बल्कि इसी वर्तुलाकार ढांचे में धीरे–धीरे उन्हें घुमाते रहें। और भाव करें कि आप ऊर्जा ग्रहण कर रहे हैं, ऊर्जा आपकी ओर आ रही है। यह क्रम भी साढ़े सात मिनट तक चलेगा।

तीसरा चरण

बिल्कुल शांत और स्थिर बैठे रहें– साक्षी होकर।

दंपतियों के लिए नादब्रह्म ध्यान –ओशो

ओशो ने स्त्री–पुरुष के जोड़े के लिए नादब्रह्म ध्यान की एक अन्य विधि भी बतायी है, जो इस प्रकार है–

पहले कमरे को ठीक से अंधेरा कर मोमबत्ती जला लें। विशेष सुगंध वाली अगरबत्ती ही जलाएं, जिसे सिर्फ इसी ध्यान के समय हमेशा उपयोग में लाएं। फिर दोनों अपना शरीर एक चादर से ढक लें। बेहतर यही होगा कि दोनों के शरीर पर कोई और वस्त्र न हो। अब एक–दूसरे का तिरछे ढंग से हाथ पकड़कर आमने–सामने बैठ जाएं। (बायें से बायां हाथ, दायें से दायां हाथ पकड़ें।) अब आंखें बंद कर लें और कम–से–कम तीस मिनट तक लगातार भंवरे की भांति 'हू ऊं ऊं ऊं ऊं' का गुंजार करते रहें। गुंजार दोनों एक साथ करें। एक या दो मिनट के बाद दोनों की श्वसन क्रिया और गुंजार एक–दूसरे में घुलमिल जाएंगे और दो ऊर्जाओं के मिलन की दोनों को प्रतीति होगी।

रात्रि, सोने के पूर्व इसे करें।

ब्रह्मनाद ध्यान

–मा अमृत प्रिया

जो भी हम प्रज्ञा सत्रों में सीखते हैं, वह वैचारिक है। अब ध्यान सत्र में हम प्रयोगात्मक रूप से अपने अंतस की गहराइयों में डूबने का प्रयास करेंगे। आज की विधि एक बहुत ही सरल, सुंदर विधि है, अपने भीतर शांति की झलक पाने के लिए। ईश्वर के स्वर में डूबने का मार्ग है यह सरल–सी विधि।

ओशो कहते हैं– मेरा संन्यासी एक पक्षी की भांति है जिसके दो पंख हैं– होश और प्रेम। हम कैसे प्रेमपूर्ण हों ...यह हम जानते हैं प्रज्ञा सत्रों में। अब होश यानी ध्यान में डूबने की बेला है।

अक्सर लोग समझते हैं ध्यान अर्थात् एकाग्रता, जो हमारी गलत धारणा है।

वस्तुतः ध्यान अर्थात् समग्रता, पूर्ण जागरूकता।

एकाग्रता सिर्फ बाहर के किसी विषय वस्तु के प्रति हो सकती है। समग्रता में आप बाहर और भीतर दोनों के प्रति होश से भरते हैं। इसमें आपके स्वयं के होने के प्रति होश भी समाहित है। अर्थात् नजर खुद पर लौटना शुरू हुई।

कहावत है– दीया तले अंधेरा। दीये की रोशनी से कमरा जगमगा उठता है, लेकिन दीये के तले अंधेरा मौजूद होता है। ठीक वही दशा हमारी है। सामान्यतः हमारे चैतन्य का दीपक बहिर्मुखी प्रकाश किरणें विकीर्णित करता है। बाहर के प्रति सजग होता है और स्वयं के प्रति बेहोश। बस, इसी की दिशा पलटनी है– स्वयं की ओर उन्मुख होना सीखना है। स्वयं के होने का मजा लेना है। अपने अकेलेपन को एकांत में बदलना है। चेतना की धारा जब स्वयं पर लौटती है तो राधा हो जाती है।

आज की ध्यान विधि का नाम है– ब्रह्मनाद ध्यान।

इसका नाम गहरे संकेत करता है। समझने की कोशिश करना। इसे जाना तो सारी ध्यान विधियों के ध्येय को जान लिया। ब्रह्म नादरूप है। धर्म की सार बात विधि के नाम में आ गई। परमेश्वर स्वर है; अनहद का संगीत है।

कबीर साहब का विख्यात वक्तव्य है– **घूंघट के पट खोल रे तोहे पिया मिलेंगे।** उस परम प्रीतम पर नहीं, घूंघट हमारे चेहरे पर है। चार घूंघट हैं, जिनके भीतर हम छिपे हैं–

1. सांसारिक घटनाओं का– सबसे ऊपरी। रोजमर्रा के जीवन में जो घटनाएं घटती हैं, उनमें व्यस्तता का घूंघट।
2. शारीरिक क्रियाओं का– स्थूल दैहिक गतिविधियों में, दिनचर्या में व्यस्तता का घूंघट।
3. मानसिक क्रियाओं का– विचारों में व्यस्तता का घूंघट। अतीत और भविष्य में डोलना, वर्तमान से चूकना।

4. भावनात्मक क्रियाओं का– हृदय तल पर सूक्ष्म भावनाओं के ऊहापोह में व्यस्तता।

जब इन चारों व्यस्तताओं में न उलझेंगे, इनके प्रति साक्षी होंगे तो धीरे से अपनी चेतना में छलांग लगती है। घटना, करना, सोचना और भावना से मुक्त जीवन–ऊर्जा स्वयं का 'होना' जानती है।

जो भी विधि करेंगे वह एक जंपिंग बोर्ड की भांति है। उसका उपयोग करना है अपने भीतर छलांग लगाने के लिए। उसी में उलझ नहीं जाना है। उसे पकड़कर नहीं रुकना है। मुख्य बात सदा याद रखना– स्वयं के प्रति होश।

आज हम जो विधि करेंगे उसके 4 चरण हैं।

प्रथम चरण (मंगलकामना)– मंगल की भावना सहायक बनती है पॉज़टिव भावदशा में आने के लिए। एक शुभारंभ करने के लिए। सर्व के प्रति मंगल, मैत्री के भाव से जब हम भरते हैं, तो जो नकारात्मक विचार हैं, उनके प्रति स्वतः हमारी पीठ हो जाती है। सिर्फ शब्द को न दोहराना; बल्कि अपने भाव को भी साथ में जोड़ देना।

दूसरा चरण (भ्रामरी प्राणायाम)– इस विधि में गुंजार एक मंत्र की भांति काम करता है। सामान्यतः हमारा मन बहुत–सी दिशाओं में दौड़ता रहता है। लेकिन जब हम किसी मंत्र का उपयोग करते हैं तब मंत्र हमारी मदद करता है, बाकी सारे विचारों से काटकर हमें एक बिंदु पर ले आता है। फिर उस एक बिंदु से छलांग लगाना आसान है। इसीलिए मंत्र के सदुपयोग में बहुत क्षमता है। यह बहुत ही सरल बात है; लेकिन बहुत प्रभावशाली भी।

हम जब मंत्र–ध्वनि का उपयोग करते हैं, पूर्णता से, तब हमारे शरीर में एक वाइब्रेशन, कंपन पैदा होने लगती है। विशेषकर हमारे दिमाग के सेल्स तरंगित होने लगते हैं। जब हमारा पूरा शरीर कंपता है और मन मंत्र में तल्लीन होता है तो दोनों (तन–मन) में एकलयता पैदा होती है। एक समतरंगता। एक हारमनी।

यह सब तब ही जान पाएंगे जब आप इन सबके साक्षी हैं। मानो दूर खड़े होकर देख रहे हैं अपने शरीर को, अपने मन को भी। फिर द्रष्टा की झलक संभव है। तब आप उस असीम आनंद, शांति, प्रसाद, आशीष को जान पाएंगे।

यहां दो संभावनाएं हैं हमारे चूकने की–

1. यदि हम मंत्र में अटके रह जाएं, तब ध्यान घटित न होगा।
2. यदि हम साक्षी से चूके, स्वयं के प्रति सजग न रहे, तब यह सिर्फ मानसिक और शारीरिक कवायद ही रह जाएगी।

इन दोनों बातों के प्रति सावधानी बरतना आवश्यक है।

गुंजार की ध्वनि संभव है बाहर जाती हुई श्वास के समय। हर आती श्वास के साथ श्रवण को जोड़ें। जो कुछ भी सुनाई देता हो उनके प्रति जागे रहें।

श्रवण के संबंध में ओशो कहते हैं–

'यदि कोई सही ढंग से सुनना सीख जाए, तो समझो उसने ध्यान का गहनतम रहस्य जान लिया।'

मंत्र से मन की गति तो ठहर जाती है। फिर श्रवण से मौन उतरने लगता है। शांति की पहली झलक मिलती है।

इस विधि को समझाते हुए ओशो 'ध्यानयोग : प्रथम एवं अंतिम मुक्ति' में कहते हैं–

शुरुआत में आपको गुंजार करना है। फिर कर्ता नहीं, श्रोता होना है। यह तैयारी है सुनने की। पहले प्रयास करो, फिर चुप्पी में उसे सुनो।

तीसरा चरण (शिथिलीकरण)– ओशो की माताजी एक अनूठा प्रयोग करती थीं– जब वे ध्यान करती थीं तब वे अपने शरीर को सहलातीं, प्रेमपूर्वक कहतीं– 'देखो, तुमने जो भोजन मांगा मैंने दिया, विश्राम भी दिया। अब मुझे थोड़ी देर ध्यान में उतरना है। तुम मेरा साथ देना।' और शरीर साथ देता था। ठीक उसी तरह आपका भी साथ देगा। आप कहें अपने शरीर को, मन को, सांसों को। सब सहयोगी बनेंगे। उन्हें भी रस आने लगेगा।

चौथा चरण (आत्मस्मरण)– चार घूंघट पार करके अंदर आए हो, अब वहीं ठहर जाओ। विश्राम करो।

यह ध्यान प्रयोग रात को अकेले में करना अच्छा होगा। कहीं गुंबज के नीचे जहाँ आपके गुंजार की वर्षा आप पर हो, या किसी छोटे–से कमरे में। जब कभी रात को नींद खुल जाए या नींद ही न आए, तब भी यह ध्यान विधि बहुत प्रभावशाली है।

राजस्थान की संत भूरीबाई जीवनभर एक किताब लिखती रहीं। जब वह छपकर आई, तो सबलोग पढ़कर हैरान हुए। क्योंकि उसमें एक ही शब्द बार–बार लिखा हुआ था। वह एक शब्द था– चुप। जब लोगों ने उनसे पूछा इसका क्या कारण? वे बोलीं– हमें भी चुप हो जाना है, तब हम परमात्मा को सुन पाएंगे। बस मौन हो जाना है ...यही धर्म की सार–शिक्षा है।

उसी मौन में डूबने का उपाय है यह ध्यान प्रयोग।

प्रयोग के अंत में जो साक्षी–शांति का स्वाद मिला, उसके प्रति अहोभाव से भरें।

ध्यान के बाद–

सागर की लहरों की आवाज सुनते हुए, बादलों की गर्जना सुनते हुए, बारिश के संगीत को सुनते हुए, आंतरिक मौन में डुबकी लगाएं। अस्तित्व जैसा है, उसके प्रति संवेदनशील हो रहो। सुनते रहो और वह गहरा रहस्य खुलने लगेगा।

तुम जहां भी हो– घर पर, कार्य के दौरान या दोनों के बीच, तुम किसी भी ध्वनि, किसी भी कोलाहल को अपने भीतरी मौन व शांति की ओर जाने का सुअवसर बना सकते हो। उनके प्रति सजग होकर। सिर्फ सुनते रहो। श्रवण साध लो।

संजीवनी मंत्र ध्यान

–मा अमृत प्रिया

मंत्र का अर्थ हम समझते हैं, किसी शब्द या वाक्य का दोहराव, जिससे हमें परमात्मा मिलेगा, मुक्ति मिलेगी। परंतु केवल कंठ से मंत्र को दोहराने से हम मुक्ति नहीं पा सकते! मुक्ति कोई उपलब्धि नहीं है, अनावरण है। मुक्ति कोई गंतव्य नहीं है, कोई दूर की मंजिल नहीं है, जहां तक चलकर पहुंचना है। मुक्ति हमारा स्वभाव है। इसलिए मुक्ति को पाने की भाषा में मत सोचना! पाने की भाषा ही लोभ की भाषा है। और जहां लोभ है, वहां मुक्ति नहीं। हमारे विषय तो बदल गए– धन की जगह ध्यान आ गया, पद की जगह परमात्मा आ गया, लेकिन हम नहीं बदले; वासना तो वही की वही रही, पाने की। क्या पाना चाहते हो, इससे फर्क नहीं पड़ता। पर जब तक पाना चाहते हो, तब तक उलझे रहोगे।

मंत्र एक शब्द है और उसी धातु से बनता है, जिससे मन बनता है। मन का काम है सलाह देना– ऐसा करो, वैसा मत करना; इसलिए तो हम सलाहकार को मंत्री कहते हैं। यह मन जो सलाह देता है, यह मंत्री है। यह सलाहकार है। मन और मंत्र संयुक्त हैं। अगर तुम बैठ कर राम–राम जपोगे, तो जपोगे किससे? मन से ही जपोगे। और अगर मन का ही अभ्यास कर रहे हो, मन की ही दंड–बैठक लग रही है तो इससे मन तो और मजबूत होगा। हां यदि मन की संकल्प और एकाग्रता की शक्तियों को बढ़ाना है, तो मंत्र उपयोगी है। मंत्र के प्रयोग से मन की शक्तियां बढ़ जाएंगी।

मगर मन की शक्तियों को बढ़ाकर भी क्या करोगे? समझ लो कि पानी पर भी चलने लगे, तो फायदा क्या है? वर्षों की मेहनत के बाद अगर कांच भी चबाने लगे, तो क्या करोगे? अगर दूसरों के विचार पढ़ने भी लगे तो क्या? अपने ही विचारों का कचरा काफी है, और दूसरे का कचरा लेकर क्या करोगे? मंत्र से मन की शक्तियां जरूर बढ़ सकती हैं; क्योंकि मंत्र एक खास लक्ष्य की प्राप्ति के लिए वैज्ञानिक प्रक्रिया है। पर मुक्ति हेतु स्थूल मंत्र से सूक्ष्म मंत्र की ओर चलना होगा।

एक सूफी कहानी द्वारा अपनी बात कहना चाहूंगी–

एक सम्राट अपने वजीर पर नाराज हो गया और उसने वजीर को आकाश–छूती एक मीनार में कैद कर दिया। वहां से कूद कर भागने का कोई उपाय न था। कूदकर भागता तो प्राण ही खो जाते। लेकिन वजीर जब कैद किया जा रहा था, तब उसने अपनी पत्नी के कानों में कुछ कहा।

पहली ही रात पत्नी मीनार के करीब गयी। उसने एक साधारण–सा कीड़ा दीवार पर छोड़ा। और उस कीड़े की मूंछों पर थोड़ा–सा मधु लगा दिया। कीड़े को मधु की गंध आयी। मधु को पाने के लिए कीड़ा मीनार की तरफ, ऊपर की तरफ सरकने लगा। मूंछ पर लगा था मधु, तो गंध तो आती ही रही और कीड़ा मधु की तलाश में सरकता गया। पत्नी ने उस कीड़े की पूंछ से एक पतले से पतला रेशम का धागा बांधा हुआ था। सरकता–सरकता कीड़ा उस

तीन सौ फीट ऊंची मीनार के आखिरी हिस्से पर पहुंच गया। वजीर वहां प्रतीक्षा कर रहा था। कीड़े को उठा लिया, पीछे बंधा हुआ रेशम का धागा भी उस तक पहुंच गया। रेशम के धागे में एक पतली–सी सुतली बंधी थी। सुतली में एक मोटा रस्सा बंधा हुआ था। और वजीर उस मोटे रस्से के सहारे मीनार से उतरकर कैद से मुक्त हो गया।

कहानी कहती है कि वजीर न केवल इस कैद से मुक्त हुआ, बल्कि उसे उस मुक्त होने के ढंग में जीवन की आखिरी कैद से भी मुक्त होने का सूत्र मिल गया।

पतला–सा धागा भी पकड़ में आ जाए तो छुटकारे में कोई बाधा नहीं है। पतले से पतला धागा भी मुक्ति का मार्ग बन सकता है। लेकिन धागा पकड़ में आ जाए! एक छोटी–सी किरण पहचान में आ जाए, तो उसी किरण के सहारे हम सूरज तक पहुंच सकते हैं।

सभी धर्म, सभी गुरु किसी पतले से धागे को पकड़कर परमात्मा तक पहुंचे हैं। वे धागे अनेक हो सकते हैं। अनेक तरह के कीड़ों पर धागा बांधा जा सकता है और जरूरी नहीं कि कीड़े की मूंछों पर मधु ही लगाया जाए, कुछ और भी लगाया जा सकता है। वे गौण बातें हैं। असली बात यह है कि धागा कैदी तक पहुंच जाए। धागा ही फिर सेतु बन जाता है मुक्ति हेतु।

आज की ध्यान विधि में हम 'सोहम्' मंत्र के धागे को पकड़कर यात्रा करेंगे और यही शुभकामना है सबके लिए कि यह मुक्ति का धागा बन जाए। जितने लोगों ने आज तक सांस की विधि द्वारा उस परमात्मा को जाना है, उतना किसी और विधि से नहीं जाना है। सांस एक सेतु है, एक पुल है, बाहर व भीतर के बीच। जब हम सांसों के प्रति सजग होंगे तो धीरे–धीरे हम उस परम धुन के प्रति भी जागेंगे।

आज की ध्यान विधि के चरण इस प्रकार हैं–

प्रथम चरण– ओशो वाणी। परमगुरु ओशो की वाणी में सुनेंगे 'सोहम्' मंत्र का महत्व।

दूसरा चरण– गुरु वंदना। ध्यान में उतरने से पहले बहुत जरूरी है कि हम सकारात्मकता से भरें। अहोभाव, श्रद्धा और झुकने के भाव से हम बहुत आसानी से सकारात्मक भावदशा में पहुंच जाते है। गुरु वंदना द्वारा हम सकारात्मकता से भरते हुए समस्त गुरुजनों के आशीष ग्रहण करेंगे।

तीसरा चरण– कीर्तन। ओशो ने ध्यान को उत्सव से, नृत्य से जोड़कर अध्यात्म को एक नया आयाम दिया। बहुत ही प्रेम से, भाव से, कीर्तन में मस्त हो जाएंगे।

चौथा चरण– संजीवनी मंत्र साधना। इस चरण में हम पहले कुछ देर तक अपनी हर आती सांस के साथ 'सो' का जाप करेंगें और जाती सांस के साथ 'हम्' का। मन ही मन दोहराएंगे। फिर और सूक्ष्म तल की यात्रा करेंगे। अब मन ही मन दोहराना छोड़कर, केवल सांसों की आवाज के प्रति जागेंगे। होशपूर्वक अपनी सांसों का श्रवण करेंगे; यह श्रवण हमारी चेतना को, जो किसी और दिशा में बह रही थी, स्वयं पर लौटा देगा। इससे अंतर्यात्रा में त्वरा उत्पन्न होगी।

ओशो 'एक ओंकार सतनाम' प्रवचनमाला में कहते हैं: जीवन को अगर तुम गौर से देखोगे तो अस्तित्व में जो सबसे ज्यादा प्रकट बात दिखाई पड़ती है, वह है गीत। पक्षी अभी भी गा रहे हैं। सुबह होते ही पक्षियों का गीत शुरू हो जाता है। हवाओं के झोंके वृक्षों से टकराते हैं और गाते हैं। पहाड़ों से झरने गिरते हैं और नाद उत्पन्न होता है। आकाश में बादल आते हैं और तुमुल-उद्घोष होता है। नदियां बहती हैं। सागर की तरंगें तटों से टकराती हैं। अगर जीवन को चारों तरफ गौर से तुम देखो और सुनो, तो तुम्हें पूरा अस्तित्व गाता हुआ मालूम पड़ेगा।

अस्तित्व में राग को पहचानने की कोशिश करो। सुबह उठकर सर्वप्रथम चारों तरफ हो रही ध्वनियों को होशपूर्वक सुनना। और अगर तुम्हें ध्वनियां सुनाई पड़ने लगें, तो तुम पाओगे कि वे दिनभर तुम्हें सुनाई पड़ती रहेंगी। क्योंकि वे सदा जारी हैं। सिर्फ तुम बहरे हो।

रात के सन्नाटे में बैठ जाना और सन्नाटे को सुनना। सन्नाटे का नाद बहुत निकट है ओंकार के। इसलिए जब भी तुम्हारे भीतर ओंकार बजेगा, तो पहले तो तुम्हें सन्नाटे का नाद ही सुनायी पड़ेगा। सन्नाटे की झांई; जैसे झींगुर बोलते हों और रात बिल्कुल चुप हो, वैसी झांई तुम्हें पूरे वक्त सुनाई पड़ने लगेगी- चौबीस घंटे! बाजार में, दुकान पर, दफ्तर में, तुम पाओगे कि वह झांई बजती ही जाती है। क्योंकि वह बज ही रही है। बाजार के शोरगुल में दब जाती है, बजना बंद नहीं होता। उपद्रव में खो जाती है, समाप्त नहीं होती। और तुम्हें पकड़ में आ जाए, तो तुम उसे कभी भी पहचान लोगे। और जैसे-जैसे तुम्हारी पकड़ साफ होती जाएगी और पहचान निखरेगी, वैसे-वैसे तुम पाओगे चौबीस घंटे, अहर्निश उसके द्वार पर राग-रागिनियों का मेला लगा हुआ है। संजीवनी मंत्र साधना से हम भीतर के इसी राग से परिचित होंगे।

सुखपूर्वक बैठ जाएं। धीमी और गहरी सांस लें और मन ही मन आती सांस के साथ 'सो' और जाती सांस के साथ 'हम्' का जाप करें अथवा सुनें। 'सोहम्' संजीवनी मंत्र है, इसे जपते समय भाव करें कि आपका शरीर, मन और प्राण परमात्मा की ऊर्जा से भरता जा रहा है।

पांचवां चरण- आत्मस्मरण। शवासन में लेट जाएं। भाव करें कि यह जीवंत अस्तित्व दिव्य संगीत से ओतप्रोत है। और उसकी तरंगें हममें जीवन-ऊर्जा का संचार कर रही हैं। पुलक, प्रसन्नता और अहोभावपूर्वक उसे ग्रहण करें। आत्मस्मरण में डूबें।

छठवां चरण-अहोभाव। दो-तीन गहरी सांसें लें और ध्यान से बाहर आ जाएं। ध्यान के इन क्षणों के लिए प्रभु को धन्यवाद दें। **धन्य हैं लोग वे, कामिल मुर्शिद जिन्हें मिल गया...!** हम सबके जीवन में ओशो आए, इससे बड़ी सौभाग्य की बात और क्या होगी! अपने भाग्य पर नाज करें। आनंदित हों, अनुगृहीत हों।

इंद्रधनुष ध्यान

–मा अमृत प्रिया

आज की ध्यान विधि, इंद्रधनुष की भांति, हमारे सातों चक्रों का उपयोग करती है अंतर्यात्रा के लिए। हर चक्र का अपना एक विशेष फंक्शन है। इस विधि में हम हर एक चक्र के उस फंक्शन का उपयोग करेंगे, अपने अंतस में डूबने के लिए। सर्वप्रथम ओंकार की ध्वनि– हम तीन बार साथ–साथ 'ओम्' का उच्चार करेंगे।

पहला चक्र– मूलाधार चक्र संबंधित है शारीरिक क्रियाओं से, हमारी कर्मठता से– तो हम शरीर के कंपन की क्रिया का प्रयोग करेंगे। इसमें हम अपने शरीर की क्रिया एवं चेतना की अक्रिया की दशा के प्रति सजग रहेंगे।

दूसरा चक्र– स्वाधिष्ठान चक्र हमारी इंद्रियों से संबंधित है– हम कान की इंद्रिय का उपयोग करेंगे। श्रवण सबसे सरल है। आंखें आक्रामक हैं; उनके उपयोग से 80 प्रतिशत ऊर्जा व्यय होती है। कान पैसिव हैं। आंखें बंद की जा सकती हैं। कान सदा खुले ही रहते हैं। वे ज्यादा ग्रहणशील हैं। अंतर्यात्रा के पथ पर श्रवण बड़ा ही सहायक है और बिना किसी प्रयास के अनायास ही होता है। संगीत और श्रोता दोनों के प्रति सजग रहें।

तीसरा चक्र– मणिपुर चक्र हमारी सांसों का केन्द्र है। हम अपनी आती–जाती सांस के प्रति जागेंगे।

चौथा चक्र– अनाहत चक्र प्रेम का, हार्दिकता का केन्द्र है। परमगुरु ओशो के स्मरण से भरकर, भाव–विभोर होकर गीत में रस लीन होंगे। महसूस करें कि उनकी प्रेम की तरंगों से आप घिर गए हैं। उन्होंने आपको हर तरफ से घेर लिया है। किसी भी चरण में अपना स्मरण न भूलें– इसका विशेष तौर पर ध्यान रहे।

पाँचवां चक्र– विशुद्ध चक्र हमारे विचारों, ज्ञान का केन्द्र है। अपने विचारों के प्रति साक्षीभाव को साधेंगे। विचारों पर ध्यान न दें; बल्कि उनके बीच के अंतराल पर। हम जहाँ अपना ध्यान टिकाएंगे, उसे ऊर्जा मिलेगी, वह बढ़ेगा। बीच के मौन पर, शांति पर ध्यान दें।

छठवाँ चक्र– आज्ञा चक्र है, दोनों आंखों की भृकुटियों के बीच में। यह निचले पाँचों चक्रों का स्वामी है। यह चक्र है चुनावरहित जागरूकता का। इसके पहले के हर चक्र पर, हम किसी विशेष क्रिया के प्रति ही सजग होते रहे; किंतु अब सर्व के प्रति, समग्र के प्रति सजग होंगे।

सातवाँ चक्र– सहस्रार चक्र है सजगता का केन्द्र। अब सारे विषयों को छोड़ दें, सिर्फ साक्षी हो रहें। बिना किसी सहारे के– बोधमात्र!

अंतिम चरण– 'लैट गो'। अब सर्व–स्वीकार के भाव में डूबें। स्वयं को समर्पित कर दें प्रभु चरणों में।

एक छोटी झेन कहानी से अपनी बात समाप्त करूंगी–

सुबह का समय था। एक पहाड़ की चोटी पर एक साधु खड़ा था। तीन युवक घाटी में घूमने निकले थे। उन्होंने साधु को देखा तो आपस में चर्चा करने लगे। एक युवक ने कहा कि

ऐसा लगता है कि वह साधु पहाड़ की चोटी पर खड़े होकर कुछ ढूँढ़ रहा है। संभवतः उसके आश्रम की कोई गाय–भैंस खो गई है, उसे खोज रहा है। उसके मठ के कुछ पशु जंगल में चरने गए होंगे, उनकी तलाश कर रहा है।

दूसरे युवक ने कहा कि नहीं, ऐसा तो नहीं लगता। क्योंकि जो आदमी कुछ खोजता है कम से कम सिर घुमाता है, यहाँ–वहाँ हिल–डुल कर देखता है, वह तो सीधा खड़ा हुआ है, चुपचाप। मुझे तो ऐसा लगता है कि शायद हमारी ही तरह सुबह अपने साथियों के साथ घूमने निकला होगा, उसके मित्र पीछे छूट गए, उनका इं तजार कर रहा है, राह देख रहा है।

तीसरे युवक ने कहा कि नहीं, तुम्हारी बात में भी मुझे सत्य नजर नहीं आता। क्योंकि जो आदमी किसी की राह देखेगा, कम से कम पीछे पलटकर तो देखेगा। यह आदमी तो पीछे घूमकर ही नहीं देख रहा है। इसका मतलब साफ है कि यह किसी का इन्तजार नहीं कर रहा। मेरी प्रतीति ऐसी है कि भोर के इस सुन्दर क्षण में, ब्रह्ममुहूर्त की इस पावन बेला में, ईश्वर की प्रार्थना में लीन, इस पहाड़ की चोटी पर खड़ा है। उन तीनों युवकों में विवाद छिड़ गया।

आदमी का मन अजीब है, किसी भी बात पर भारी वाद–विवाद, बहस करने लगता है। ऐसी बातों पर, जिनसे कुछ लेना–देना नहीं। उस साधु से इन तीनों को क्या लेना–देना? हम किसी भी बात में विवाद खड़ा करने को तत्पर रहते हैं। एक आदमी ने जो कहा, दूसरा उसका विरोध करेगा, मान नहीं सकता। दूसरे की बात भला क्यों मानें? अहंकार को चोट लगती है। तीनों युवकों में झगड़ा खड़ा हो गया। अंत में उन्होंने तय किया कि हम घूमने तो निकले ही हैं, चलो पहाड़ की चोटी पर चढ़ते हैं और चलकर उस साधु से ही पूछते हैं कि वह आखिर कर क्या रहा है?

तीनों युवक उसके पास पहुँचे। पहले युवक ने कहा– महाराज, क्या आपके कोई पशु इत्यादि, गाय–भैंस जंगल में खो गए हैं? उन्हें खोज रहे हैं?

साधु ने मुस्कुराकर कहा कि कैसी नासमझी की बात करते हो! संन्यासी का इस जगत में कुछ भी नहीं होता है। मैं किसी गाय–भैंस का मालिक नहीं हूँ। अब मैंने बाह्य जगत पर से सारी मालकियत छोड़ दी है, मेरी पूरी मालकियत अपने ऊपर है। इसलिए तो साधु को स्वामी कहते हैं। स्वामी का अर्थ है– जो अपना मालिक हो गया है। अब मैं अपना मालिक हो गया हूँ। दूसरों पर स्वामित्व मैंने छोड़ दिया है। मेरी कोई गाय–भैंस नहीं है। किसी को नहीं खोज रहा। दूसरा युवक बहुत प्रसन्न हुआ, बोला– तब तो निश्चित रूप से मेरी बात सही है। आपके कोई संगी–साथी पीछे छूट गए हैं। आप उनके आने की प्रतीक्षा कर रहे हैं?

साधु हँसने लगा। उसने कहा कि नहीं, मेरा कोई संगी–साथी नहीं है। संन्यासी तो वही है जो जानता है और जीता है अपने एकांत को। अकेले इस जग में आए और अकेले इस जग से जाना है। जन्म में अकेले, मृत्यु में अकेले, तो बीच में संग–साथ हो कैसे सकता है? हाँ, ऐसा भ्रम पाल सकते हैं हम। एक सपने में जी सकते हैं। सच्चाई नहीं हो सकती। मैं किसी का इन्तजार नहीं कर रहा, किसी की राह नहीं देख रहा। मेरा कोई संगी–साथी नहीं, नितांत अकेला हूँ।

तब तो तीसरा युवक अत्यन्त खुश होकर बोला– निश्चित रूप से मेरी ही बात सही है, मेरे दोनों साथी मान ही नहीं रहे थे। मैं इनसे कह रहा था कि आप सुबह के सुन्दर क्षण में, इस

ब्रह्ममुहूर्त की बेला में, यहाँ ईश्वर की प्रार्थना में लीन खड़े हैं। हैं न?

साधु जोर से अट्टहास करके हँसा। उसने कहा कि अरे! कहाँ का ईश्वर और किसकी प्रार्थना? कहीं कोई व्यक्तिवाची ईश्वर नहीं है, जो प्रार्थना सुनता हो। किसकी प्रार्थना, कैसी प्रार्थना? और मांगना तो भिखमंगापन है। ईश्वर अगर हो भी, तो मैं कुछ मांगूंगा नहीं। तब भी प्रार्थना न करूंगा। मेरी कामनाएं समाप्त हो गई हैं।

तब वे तीनों युवक बहुत हैरान हुए और कहने लगे कि आपने तो हमें आश्चर्य में डाल दिया। फिर आप ही बताएं कि आप यहाँ क्या रहे हैं? इतनी देर से आप चुपचाप खड़े क्या कर रहे हैं? उस साधु ने कहा कि 'मैं कुछ भी नहीं कर रहा हूँ, मैं सिर्फ हूँ।' बड़ी अजीब बात उसने कही। उन युवकों ने पूछा कि आपकी बात हम समझे नहीं, आप कहते हैं कि मैं सिर्फ हूँ, इसका मतलब? ऐसा तो कभी हमने सुना नहीं।

उस साधु ने समझाया– न मैं किसी की प्रतीक्षा कर रहा हूँ, न किसी को खोज रहा हूँ और न ही किसी प्रार्थना में लीन हूँ। कुछ समय के लिए मैंने सब गतिविधियां छोड़ दी हैं और निष्क्रिय खड़ा हूँ। जैसे यह चट्टान जिस पर हम खड़े हैं, अरबों साल से यहाँ पर है, हम नहीं हो जाएंगे तब भी यह चट्टान यहीं रहेगी। मैं तुमसे पूछता हूँ कि बताओ यह चट्टान यहाँ क्या कर रही है? क्या किसी का इन्तजार कर रही है? उन युवकों ने कहा कि नहीं, चट्टान कैसे किसी का इन्तजार करेगी! साधु ने पूछा– क्या यह कुछ खोज रही है? उन्होंने कहा कि नहीं, यह कुछ भी नहीं खोज रही। साधु ने कहा– फिर किसी कल्पित ईश्वर की प्रार्थना में लीन है? उन युवकों ने कहा कि नहीं, ऐसा भी नहीं कहा जा सकता कि चट्टान ईश्वर की प्रार्थना में लीन है।

साधु हँसकर बोला कि जब चट्टान को अनुमति है, कुछ न करने की, तो क्या मुझे अनुमति नहीं है? क्या मैं थोड़ी देर कुछ किए बिना नहीं रह सकता? यह जो वृक्ष है पीपल का, जिसके नीचे हम खड़े हैं, पिछले चालीस सालों से मैं इस वृक्ष को जानता हूँ। न तो यह किसी का इन्तजार कर रहा है, न किसी को ढूँढ़ रहा है, न किसी ईश्वर की प्रार्थना में लीन है। यह कुछ भी नहीं कर रहा, यह सिर्फ है। बस ऐसे ही मैं भी हूँ। यह होने की स्थिति ही ध्यान है। थोड़ी देर के लिए जब कुछ भी नहीं कर रहे, न शरीर से, न मन से, न हृदय से... केवल हैं। और जागरूक हैं...। वह अवस्था ध्यान की अवस्था है। तो ध्यान में हुआ तो जा सकता है; लेकिन ध्यान को किया नहीं जा सकता। ध्यान कोई क्रिया नहीं; बल्कि एक अवस्था है, एक स्थिति है। इस बात को खूब अच्छे से समझ लें, तो ही ध्यान में इस अवस्था को उपलब्ध किया जा सकता है। जिन मित्रों के मन में यह धारणा है कि ध्यान कोई क्रिया है, हम उसे करेंगे, वे ध्यान से चूक जाएंगे। क्योंकि ध्यान क्रिया नहीं, निष्क्रिय जागरूकता का नाम है।

शुरुआत तो हम विधि से, क्रिया से करेंगे, लेकिन अंत में लक्ष्य निष्क्रिय जागरूकता है। यह बात उलटी लग सकती है, पर जीवन का यथार्थ यही है। जैसे कोई आदमी अगर सोना चाहे, तो उसे श्रम करना आवश्यक है। बिना श्रम किए अगर नींद में जाना चाहे, तो नींद नहीं, बेचैनी हाथ लगेगी। आइए, ध्यान की शुरुआत करते हैं।

अंत में– ***मेरी करनी थोड़ी-सी है, तेरी मेहरबानी बड़ी है!....***

इसी भाव में डूबे हुए अहोभावपूर्वक ध्यान से बाहर आएं।

ऊर्जा ध्यान

–मा अमृत प्रिया

ऊर्जा शब्द विज्ञान में प्रयोग किया जाता है, भौतिक ऊर्जा के रूप में। दूसरा, अध्यात्म में ऊर्जा शब्द का उपयोग चेतना के संघनित रूप के लिए किया जाता है। भीतर कॉन्शसनैस जब कंडैन्स्ट हो जाती है, तो वह जीवन–ऊर्जा बन जाती है– लाइफ एनर्जी, वाइटल फोर्स। यह जीवन–ऊर्जा अलग–अलग ढंगों से व्यक्त होती है।

एक तो हमारा स्थूल शरीर है और दूसरा सूक्ष्म शरीर है। हमारे भीतर सूक्ष्म शरीर में सात चक्र हैं। इन चक्रों के माध्यम से वह ऊर्जा भी सात रंगों में व्यक्त होती है। भीतर भी एक इन्द्रधनुष है। जीवन की ऊर्जा का श्वेत रंग है, किंतु उसके प्रगटीकरण के सात ढंग हैं।

ऊर्जा–ध्यान की विधि बहुत ही सरल है। प्रत्येक व्यक्ति इसको कर सकता है। इसका पहला चरण मंगलकामना है। दूसरा चरण ऊर्जा जागरण का है। खड़े होकर अपने शरीर को नीचे से लेकर ऊपर तक कंपित करना है। उसके कंपन को महसूस करना है और भाव करना है कि पैर के पंजों से होती हुई ऊर्जा सिर की तरफ जा रही है। पांच मिनट यह प्रक्रिया करने के बाद मंगलभाव से भरे हुए धीरे से बैठ जाना है। रीढ़ सीधी रखनी है, गर्दन सीधी– बिना तनाव के जितनी सीधी हो सके और फिर क्रमशः एक–एक चक्र पर संगीत के साथ भाव करना है कि ऊर्जा उस चक्र को और उस चक्र से संबंधित अंगों को स्वस्थ कर रही है।

जैसे इन्द्रधनुष में सात रंग होते हैं, जैसे संगीत में सात स्वर होते हैं, ठीक वैसे ही हमारे भीतर सूक्ष्म शरीर में भी सात चक्र हैं जहां ऊर्जा का प्रवाह होता है। जहां से ब्रह्म की ऊर्जा हमारे स्थूल शरीर तक पहुंचती है। वे सम्पर्क बिंदु हैं। उनकी स्थिति को स्मरण रखें। सबसे पहला मूलाधार चक्र है जो शरीर के सबसे निचले हिस्से पर है। ऐसा समझें कि मेरुदंड का जो अंतिम हिस्सा है, जिसे कॉकिक्स (मेरुपुच्छ) कहते हैं वहां पर मूलाधार चक्र है।

दूसरा, जननेंद्रिय के पीछे स्वाधिष्ठान चक्र है। तीसरा, मणिपुर चक्र नाभि के पास। चौथा, अनाहत या हृदय चक्र छाती के मध्य में। पांचवाँ, विशुद्ध चक्र गले में। छठवाँ, आज्ञा चक्र दोनों भृकुटियों के बीच में जहां तिलक लगाते हैं। और सातवां, सहस्त्रार सिर के सबसे ऊपरी हिस्से पर। इन चक्रों की स्थिति सामने से और पीछे से, दोनों तरफ से आंकी जा सकती है। यद्यपि चक्र की ठीक–ठीक स्थिति शरीर के मध्य भाग में है। बाएं और दाएं, दोनों के ठीक मध्य में, सामने और पीछे इन दोनों के भी ठीक मध्य में। लेकिन कोरस्पॉन्डिंग पोइंट्स जो शरीर में हैं उनको हम सामने और पीछे, दोनों तरफ से पकड़ सकते हैं।

देह–कंपन अभ्यास के बाद, बैठने के उपरांत इस जागी हुई ऊर्जा का उपयोग चक्र उपचार में करते हैं। शुरुआत पीछे से करते हैं। मूलाधार चक्र से संगीत चलता है। करीब डेढ़ मिनट तक हम भाव करते हैं कि मूलाधार चक्र स्वस्थ हो रहा है और उससे संबंधित अंग, नीचे के दोनों पैर भी स्वस्थ हो रहे हैं। पीछे की ओर से क्रमशः ऊपर की ओर बढ़ते हैं।

चक्र की स्थिति को और ठीक से महसूस करने के लिए एक हाथ से अथवा दोनों हाथों से चक्र को स्पर्श करना भी उपयोगी है। उससे भाव अधिक गहन हो पाता है और जहां आप हाथ से स्पर्श कर रहे हैं वहां ऊर्जा का अहसास घनीभूत रूप से होने लगता है। जो कल्पनाशील हैं वे चाहें तो चक्र का रंग भी प्रक्षेपित करके देख सकते हैं, अथवा कोई फूल या कोई और पैटर्न जो आपको पसंद आता है, भाव करें कि उस रंग का फूल उस चक्र पर खिल रहा है।

ये जो सात रंग हैं इन्द्रधनुष के, वही हमारे चक्रों के रंग भी हैं। मूलाधार का रंग लाल है, स्वाधिष्ठान का रंग नारंगी, मणिपुर चक्र पीले रंग का, हृदय चक्र हरे रंग का, विशुद्ध चक्र नीले रंग का, आज्ञा चक्र जामुनी रंग का और सहस्त्रार बैंगनी रंग का है। इन रंगों की कल्पना भी सहयोगी हो जाती है। भाव करें कि संगीत की तरंगें उस चक्र तक पहुंचकर उस चक्र को स्वस्थ कर रही हैं। ब्रह्म–ऊर्जा उस चक्र पर बरस रही है, ग्रहणशील हो जाएं, पूरी तरह पैसिव और रिसैप्टिव हो जाएं। आपको कुछ करना नहीं है केवल ग्रहणशीलता का भाव कि आप ऊर्जा रिसीव कर रहे हैं और उस चक्र से संबंधित अंग धीरे–धीरे स्वस्थ हो रहे हैं। उनमें ऊर्जा का प्रवाह हो रहा है।

इस प्रकार डेढ़–डेढ़ मिनट एक चक्र को हीलिंग देते हुए क्रमशः रीढ़ की हड्डी पर पीछे से आरोही क्रम में चलेंगे। सहस्त्रार पर पहुंचने के बाद सामने से उतरते हुए यानी अवरोही क्रम में फिर एक–एक चक्र की हीलिंग करेंगे। इस प्रकार इन सातों चक्रों की चिकित्सा दिव्य ऊर्जा द्वारा की जाती है।

हीलिंग करने के पश्चात ध्यान का प्रयोग आता है– शिथिलीकरण और आत्मस्मरण। उपचार तो एक बहाना है, असली बात है ध्यान। उपचार के माध्यम से आप ग्रहणशील हो जाते हैं। ऊर्जा ग्रहण करने की क्षमता, ग्राहकता बढ़ जाती है। तब शिथिल होना अति–आसान हो जाता है और उसके बाद आत्मस्मरण में डूबना भी बहुत सुगम हो जाता है। तो ऊर्जा ध्यान, सच पूछो तो ध्यान का ही एक प्रयोग है। इलाज को उसका एक बाइ–प्रोडक्ट, उप–उत्पत्ति समझें। मुख्य उद्देश्य तो छिपा हुआ है। यद्यपि कोई मित्र चाहें तो मात्र उपचार के लिए भी प्रयोग कर सकते हैं। डिवाइन हीलिंग का यह प्रयोग बड़ा अद्भुत है।

अंग्रेजी के शब्द मैडिसन और मेडिटेशन एक ही धातु से जन्मते हैं।

इस ध्यान के दौरान, हो सकता है, कुछ मित्रों को झटका या दबाव या ऊर्जा के बहने में अवरोध महसूस हो। लेकिन जैसे–जैसे वे हील हो जाएंगे वैसे–वैसे ये अवरोध भी दूर हो जाएंगे।

जब ध्यान से लौटो तो जो ऊर्जा, जो आनंद तुमने महसूस किया उसे नाचकर उलीच देना। धन्यभागी महसूस करना स्वयं को। अहोभाव में डूबना, वही वास्तविक प्रार्थना है।

शिवनेत्र ध्यान (संगीत व निर्देश सहित)

–मा अमृत प्रिया

सुना है मैंने, एक नाव उलट गई थी। एक व्यक्ति उस नाव में बच गया और एक निर्जन द्वीप पर जा लगा। दिन, दो दिन, चार दिन, सप्ताह, दो सप्ताह उसने प्रतीक्षा की, कि जिस बड़ी दुनिया का वह निवासी था, वहां से कोई उसे बचाने आ जायेगा। फिर महीने भी बीते और वर्ष भी बीतने लगे। किसी को आते न देखकर वह धीरे–धीरे प्रतीक्षा करना भी भूल गया। पांच वर्षों के बाद कोई जहाज वहां से गुजरा। उस एकान्त निर्जन द्वीप से उस आदमी को निकालने के लिए जहाज से लोग उतरे, और जब उन लोगों ने उस खो गये आदमी को वापस चलने को कहा, तो वह विचार में पड़ गया।

उन लोगों ने कहा, 'क्या विचार कर रहे हैं; चलना है या नहीं?' उस आदमी ने कहा, 'मैं तो उस दुनिया को बिल्कुल ही भूल चुका हूं, अगर तुम मुझे कुछ याद दिला सको तो...।' उन लोगों के पास जहाज पर कुछ अखबार व पत्रिकाएं थीं, उन्होंने वे दिखाते हुए कहा, 'ये देखो ऐसी थीं तुम्हारी दुनिया।' अखबार व पत्रिकाएं देखकर उस व्यक्ति ने कहा, 'तुम अपनी दुनिया संभालो और अखबार भी, मैं जाने से इन्कार करता हूं।'

बहुत हैरान हुए वे लोग। उनकी हैरानी स्वाभाविक थी। पर वह आदमी कहने लगा, 'इन पांच वर्षों में मैंने जिस शान्ति, जिस मौन और जिस आनंद का अनुभव किया है, वह मैंने जीवन के पूरे पचास वर्षों में भी तुम्हारी उस बड़ी दुनिया में कभी अनुभव नहीं किया था। और मेरा सौभाग्य तथा परमात्मा की अनुकम्पा कि उस दिन तूफान में नाव उलट गयी और मैं इस द्वीप पर आ लगा। यदि मैं इस द्वीप पर न लगा होता, तो शायद मुझे पता भी न चलता कि मैं किस बड़े पागलखाने में पचास वर्षों से जी रहा था।'

हम उस बड़े पागलखाने के हिस्से हैं; उसमें ही पैदा होते हैं, उसमें ही बड़े होते हैं, उसमें ही जीते हैं ...और इसलिए कभी पता भी नहीं चल पाता कि जीवन में जो भी पाने योग्य है, वह सभी, हाथ से चूक गया है। और जिसे हम सुख कहते हैं और जिसे हम शांति कहते हैं, उसका न तो सुख से कोई संबंध है और न शांति से कोई संबंध है। और जिसे हम जीवन कहते हैं, शायद वह मौत से किसी भी हालत में बेहतर नहीं है।

लेकिन परिचय कठिन है। चारों ओर एक शोरगुल की दुनिया है। चारों ओर शब्दों का, शोरगुल का उपद्रवग्रस्त वातावरण है। उस सारे वातावरण में हम वे रास्ते ही भूल जाते हैं, जो भीतर मौन और शांति में ले जा सकते हैं।

अब न तो यह संभव है कि सभी की नावें डूब जाएं; न यह संभव है कि इतने तूफान उठें; और न यह संभव है कि इतने निर्जन द्वीप मिल जायें कि सारे लोग शान्ति और मौन को अनुभव कर सकें। लेकिन, फिर भी यह संभव है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने भीतर ही उस निर्जन द्वीप को खोज ले।

अतः ध्यान अपने ही भीतर उस निर्जन द्वीप की खोज का मार्ग है। यह भी समझ लेने जैसा है कि दुनिया के सारे धर्मों में बहुत विवाद हैं– सिर्फ एक बात के संबंध में विवाद नहीं है–और वह बात यह है कि परमात्मा हमारे भीतर है। मुसलमान कुछ और सोचते हैं, हिन्दू कुछ और, ईसाई कुछ और, पारसी कुछ और; जैन, बौद्ध कुछ और। उन सबके सिद्धान्त बहुत भिन्न–भिन्न हैं। लेकिन एक बात के संबंध में इस पृथ्वी पर कोई भी भेद नहीं है, और वह यह कि जीवन के आनंद का स्रोत भीतर ही है। और परमात्मा तक अगर कोई भी पहुंचा है, तो भीतर से उसे महसूस करके। वह चाहे जीज़स हों या फिर बुद्ध या मुहम्मद या महावीर– कोई भी... जिसने भी जीवन की परम धन्यता का अनुभव किया है, उसने अपने ही भीतर गहरे में डूबकर उस निर्जन द्वीप की खोज की है। आज की ध्यान–विधि के द्वारा हम भी अपने भीतर उस निर्जन द्वीप की खोज पर चलेंगे।

आज का ध्यान तीसरे नेत्र से संबंधित है जिसे हम शिवनेत्र या आज्ञा चक्र के नाम से भी जानते हैं। यह हमारा छठवाँ चक्र है। इस विधि द्वारा ध्यान में उतरने के लिए हम एकाग्रता का प्रयोग करेंगे जिसे त्राटक भी कहा जाता है। त्राटक विभिन्न तरह से किया जा सकता है–

1. उगते या ढलते सूरज के साथ।
2. 100 वाट के बल्ब के साथ (जो हम आज करेंगे)।
3. गुरु के चेहरे को देखते हुए। (ओशो स्वयं 1974 तक यह प्रयोग करवाते थे। जिसमें लाइट सिर्फ ओशो के चेहरे पर पड़ती थीं और बाकी हर तरफ अंधेरा होता था।)
4. आईने में स्वयं की आंखों में देखते हुए।
5. नासाग्र दृष्टि का प्रयोग।

आज्ञा चक्र की साधना पर बहुत–सी परंपराओं ने जोर दिया है; क्योंकि यह द्वार है– सहस्त्रार के लिए। इससे पहले द्वैत है। और सहस्त्रार पर अद्वैत। यह बीच का एक पतला पर्दा है।

इस विधि के चरण इस प्रकार होंगेः

प्रथम चरण– ओंकार। तीन बार साथ–साथ अस्तित्व की ध्वनि का उच्चार करेंगे।

दूसरा चरण– त्राटक। बल्ब जला दिया जाएगा। अपलक उसे निहारें। जब हम किसी चीज पर एकाग्रता साधते हैं तो हमारा ध्यान अन्य जगहों से हटकर उस एक विशेष बिंदु पर आ जाता है। इससे मन के पैटर्न को तोड़ने में सहायता मिलती है। और एकाग्रता से अनायास ही ऊर्जा तीसरे नेत्र पर आ जाती है।

तीसरा चरण– अंतर–दर्शन। अब आंखें बंद कर लें। अपने भीतर जो कुछ भी नजर आ रहा हो, उसे देखें। थोड़ी देर तक बल्ब का प्रतिबिंब दिखेगा, कुछ बदलते रूप–रंग दिखेंगे। आप उसके साक्षी बने रहें।

त्राटक और अंतर–दर्शन का वर्तुल दो बार पुनः दोहराएंगे। कुल 3 बार करेंगे।

फिर शिथिलीकरण और आत्मस्मरण द्वारा अंततः शिथिल व शांत होकर अपने अंतस के उस निर्जन द्वीप की ओर चलेंगे। अंत में स्वयं के केन्द्र के निर्जन द्वीप की एक झलक के लिए धन्यवाद भाव से भर जाएं। आनंदित हों, अनुगृहीत हों। झूमें, नाचें, इस पूरे अस्तित्व के उत्सव में शामिल हों।

शिवनेत्र ध्यान में बरती जाने वाली सावधानियां :

1. सौ वाट का सामान्य बल्ब प्रयोग करें। चाहें तो 'डिमर स्विच' लगा लें, उसे अपने पास रखें। आंख बंद करने से पूर्व प्रकाश बुझा दें।
2. बल्ब आंखों की ऊंचाई पर हो।
3. बल्ब से कम–से–कम 3 मीटर (10 फीट) की दूरी पर बैठें।
4. आंखों में बार–बार पानी आए तो इस प्रयोग को बंद कर दें।
5. शिवनेत्र ध्यान रात में करना ज्यादा उपयोगी है।
6. इस प्रयोग को तीन माह से ज्यादा न करें।

शिवनेत्र ध्यान (संगीत व निर्देश के बिना)

–ओशो

यह एक घंटे का ध्यान है और इसमें दस–दस मिनट के छह चरण हैं। साधकों के सामने, कुछ दूरी पर, थोड़ी ऊंचाई पर, एक नीले रंग का प्रकाश– यानी बिजली का बल्ब जलता है, जो प्रकाश को घटाने–बढ़ाने वाले एक यंत्र के द्वारा, दस मिनट में तीन बार, बारी–बारी धीमा और तेज किया जाता है। उसके सहारे ही यह ध्यान संचालित होता है।

(प्रकाश को घटाने–बढ़ाने वाले यंत्र, डिमिंग स्विच, के साथ 300 वाट का नीले रंग का प्रकाश इसके लिए आदर्श है। लेकिन साधारणतः नीले प्रकाश या मोमबत्ती से भी काम चलाया जा सकता है।)

पहला चरणः थिर बैठें। हल्के–हल्के, बिना आंखों में कोई तनाव लाए सामने जल रहे प्रकाश को देखें।

दूसरा चरणः आंखें बंद कर लें और कमर से ऊपर के भाग को धीरे–धीरे दाएं से बाएं और बाएं से दाएं हिलाएं। और साथ ही साथ यह भी अनुभव करते रहें कि आपकी आंखों ने पहले चरण के समय जो प्रकाश पीया है, वह अब शिवनेत्र यानी तीसरी आंख में प्रवेश कर रहा है। यह सचमुच घटित होता है।

दोनों चरणों को बारी–बारी तीन दफे दोहराएं।

त्राटक ध्यान 1

–ओशो

यह ध्यान चालीस मिनट का है और इसमें बीस–बीस मिनट के दो चरण हैं।

पहला चरण–

पांच या छह फुट की ऊंचाई पर ओशो का एक बड़ा–सा फोटो दीवार पर इस प्रकार टांगें कि फोटो पर पर्याप्त प्रकाश पड़े। शरीर पर कम–से–कम और ढीले वस्त्र रखें। फोटो से चार–पांच फुट की दूरी पर खड़े हो जाएं। दोनों हाथ ऊपर उठाएं, एकटक ओशो के फोटो को देखें– और 'हू–हू–हू' की तीव्र आवाज लगातार करते हुए उछलना शुरू करें। ओशो की उपस्थिति अनुभव करें और 'हू–हू–हू' की आवाज तेज करें। न आंखें बंद करें, न पलकें झपकाएं। आंसू आते हों तो आने दें। आंखें फोटो पर एकाग्र रखें और शरीर में जो भी कंपन और क्रियाएं होती हों, उन्हें सहयोग करके तीव्र करें।

महामंत्र 'हू' की चोट से भीतर की काम–ऊर्जा ऊपर की ओर उठेगी।

दूसरा चरण–

अब सारी क्रियाएं– 'हू–हू–हू' की आवाज, उछलना और ओशो के चित्र को एकटक देखना– सब बंद कर दें। शरीर को बिल्कुल स्थिर कर लें, आंखें मूंद लें और भीतर की ऊर्जा को अनुभव करें। गहरे ध्यान में डूब जाएं। बीस मिनट के बाद ध्यान से वापस लौट आएं।

इस प्रकार यह त्राटक ध्यान पूरा होगा।

त्राटक ध्यान 2

–ओशो

यह प्रयोग एक घंटे का है। पहला चरण चालीस मिनट का और दूसरा बीस मिनट का।

पहला चरण

कमरे को चारों ओर से बंद कर लें, और एक बड़े आकार का दर्पण अपने सामने रखें। कमरे में बिल्कुल अंधेरा होना चाहिए। अब एक दीपक या मोमबत्ती जलाकर दर्पण के बगल में इस प्रकार रखें कि उसकी रोशनी सीधी दर्पण पर न पड़े। सिर्फ आपका चेहरा ही दर्पण में प्रतिबिंबित हो, न कि दीपक की लौ। अब दर्पण में अपनी दोनों आंखों में बिना पलक झपकाए देखते रहें– लगातार चालीस मिनट तक। अगर आंसू निकलते हों तो उन्हें निकलने दें, लेकिन पूरी कोशिश करें कि पलक गिरने न पाए। आंखों की पुतलियों को भी इधर–उधर न घूमने दें– ठीक दोनों आंखों में झांकते रहें।

दो–तीन दिन के भीतर ही विचित्र घटना घटेगी– आपके चेहरे दर्पण में बदलने प्रारंभ

हो जाएंगे। आप घबरा भी सकते हैं। कभी–कभी बिल्कुल दूसरा चेहरा आपको दिखाई देगा, जिसे आपने कभी नहीं जाना है कि वह आपका है। पर ये सारे चेहरे आपके ही हैं। अब आपके अचेतन मन का विस्फोट प्रारंभ हो गया है। कभी–कभी आपके विगत जन्म के चेहरे भी उसमें आएंगे।

करीब एक सप्ताह के बाद यह शक्ल बदलने का क्रम बहुत तीव्र हो जाएगा; बहुत सारे चेहरे आने–जाने लगेंगे, जैसा कि फिल्मों में होता है। तीन सप्ताह के बाद आप पहचान न पाएंगे कि कौन–सा चेहरा आपका है। आप पहचानने में समर्थ न हो पाएंगे, क्योंकि इतने चेहरों को आपने आते–जाते देखा है। अगर आपने इसे जारी रखा, तो तीन सप्ताह के बाद, किसी भी दिन, सबसे विचित्र घटना घटेगी– अचानक आप पाएंगे कि दर्पण में कोई चेहरा नहीं है– दर्पण बिल्कुल खाली है और आप शून्य में झांक रहे हैं! यही महत्त्वपूर्ण क्षण है।

तभी आंखें बंद कर लें और अपने अचेतन का साक्षात करें। जब दर्पण में कोई प्रतिबिंब न हो, तो सिर्फ आंखें बंद कर लें, भीतर देखें– और आप अचेतन का साक्षात करेंगे।

वहां आप बिल्कुल नग्न हैं– निपट जैसे आप हैं। सारे धोखे वहां तिरोहित हो जाएंगे। यह एक सत्य है, पर समाज ने बहुत–सी पर्तें निर्मित कर दी हैं, ताकि मनुष्य उससे अवगत न हो पाए। एक बार आप अपने को पूरी नग्नता में देख लेते हैं, तो आप बिल्कुल दूसरे आदमी होने शुरू हो जाते हैं। तब आप अपने को धोखा नहीं दे सकते हैं, आप जान गए कि वस्तुतः आप क्या हैं। और जब तक आप यह नहीं जानते कि आप क्या हैं, आप कभी रूपांतरित नहीं हो सकते। कारण– कोई भी रूपांतरण इस नग्न–सत्य के दर्शन में ही संभव है; यह नग्न–सत्य किसी भी रूपांतरण के लिए बीजरूप है। अब आपका असली चेहरा सामने है, जिसे आप रूपांतरित कर सकते हैं। और वास्तव में, ऐसे क्षण में रूपांतरण की इच्छा मात्र से रूपांतरण घटित हो जाएगा, और कुछ भी करने की जरूरत नहीं है।

दूसरा चरण

अब आंखें बंद कर विश्राम में चले जाएं।

गौरीशंकर ध्यान

–ओशो

घंटे भर के इस ध्यान में चार चरण हैं और प्रत्येक चरण पंद्रह मिनट का है।

पहले चरण को ठीक से करने पर आपके रक्त प्रवाह में कार्बन–डाई–ऑक्साइड का तल इतना ऊंचा हो जाएगा कि आप अपने को गौरीशंकर– एवरेस्ट शिखर पर महसूस करेंगे। वह आपको इतना ऊपर उठा देगा।

इस ध्यान प्रयोग के दूसरे चरण में साधकों के सामने प्रकाश का एक बल्ब तेजी से सतत जलता–बुझता रहता है।

पहला चरण

आंखें बंद करके बैठ जाएं। अब नाक से उतनी गहरी श्वास भीतर लें, जितनी ले सकते हैं। और इस श्वास को भीतर तब तक रोके रहें, जब तक ऐसा न लगने लगे कि अब अधिक नहीं रोका जा सकता। फिर धीरे–धीरे श्वास को मुंह से बाहर निकाल दें। और फिर तब तक श्वास भीतर न लें, जब तक लेना मजबूरी न हो जाए। यह क्रम पंद्रह मिनट तक जारी रखें।

दूसरा चरण

श्वसन–क्रिया को सामान्य हो जाने दें। आंखें खोल लें और सतत जलते–बुझते हुए तेज प्रकाश को धीमे–धीमे देखते रहें। दृष्टि को तनाव नहीं देना है। और शरीर को पूरी तरह स्थिर रखें।

तीसरा चरण

खड़े हो जाएं, आंखें बंद कर लें और शरीर को लातिहान के ढंग से धीरे–धीरे हिलने दें। लातिहान के द्वारा आप अपने अंतस को शरीर के माध्यम से प्रकट होने दें, और उस अभिव्यक्ति में पूरा सहयोग दें।

चौथा चरण

लेट जाएं और सर्वथा निष्क्रिय हो रहें, साक्षी हो रहें।

मंडल ध्यान –ओशो

घंटे भर के इस शक्तिशाली ध्यान में पंद्रह–पंद्रह मिनट के चार चरण हैं। पहला चरण खड़े होकर करना है; दूसरा बैठकर; तीसरा और चौथा सर्वथा निष्क्रिय होकर। सूर्योदय के बाद या सूर्यास्त के पहले, इसे कभी भी किया जा सकता है।

पहला चरण

आंखें खुली रखकर एक ही स्थान पर खड़े–खड़े दौड़ें। घुटनों को, जहां तक बन पड़े, ऊपर उठाएं। श्वास को गहरा और सम रखें। इससे ऊर्जा सारे शरीर में घूमने लगेगी।

दूसरा चरण

आंखें बंद करके बैठ जाएं। मुंह को शिथिल और खुला रखें। और धीमे–धीमे चक्राकार झूमें– जैसे हवा में पेड़–पौधे झूमते हैं। इससे भीतर जागी ऊर्जा नाभि–केंद्र पर आ जाएगी।

तीसरा चरण

अब आंखें खोलकर पीठ के बल सीधे लेट जाएं और दोनों आंखों की पुतलियों को क्लॉकवाइज़– बाएं से दाएं वृत्ताकार घुमाएं। पहले धीरे–धीरे घुमाना शुरू करें, क्रमशः गति को तेज और वृत्त को बड़ा करते जाएं।

मुंह को शिथिल व खुला रखें तथा सिर को बिल्कुल स्थिर। श्वास मंद एवं कोमल बनी रहे। इससे नाभि–केंद्रित ऊर्जा तीसरी–आंख पर आ जाएगी।

चौथा चरण

आंखें बंद कर निष्क्रिय हो रहें। विश्राम में चले जाएं– ताकि तीसरी आंख पर एकत्रित हो गयी ऊर्जा अपना काम कर सके।

रात्रि–ध्यान –ओशो

रात्रि, सोने के पूर्व, बिस्तर पर लेट जाएं, कमरे में अंधेरा कर लें, और आंख बंद करके जोर से श्वास मुंह से बाहर निकालें।

निकालने से शुरू करें– एक्सलेशन, लेने से नहीं, निकालने से। जोर से श्वास मुंह से बाहर निकालें, और निकालते समय ओऽऽऽऽऽ की ध्वनि करें। जैसे–जैसे ध्वनि साफ होने लगेगी, ओम् अपने आप निर्मित हो जाएगा; आप सिर्फ ओऽऽऽऽऽ का उच्चार करें। ओम् का आखिरी हिस्सा, अपने आप, जैसे ध्वनि व्यवस्थित होगी– आने लगेगा।

आपको ओम् नहीं कहना है, आपको सिर्फ ओऽऽऽऽऽ कहना है– म् को आने देना है। पूरी श्वास को बाहर फेंक दें, फिर ओठ बंद कर लें और शरीर को श्वास लेने दें। आप मत लें।

निकालना आपको है, लेना शरीर को है। लेने का काम शरीर कर लेगा। श्वास रोकनी नहीं है। लेते समय आपको कुछ भी नहीं करना है– न लेना है, न रोकना है– बस, छोड़ना है।

तो दस मिनट तक ओऽऽऽऽऽ की आवाज के साथ श्वास को छोड़ें– मुंह से; फिर नाक से श्वास लें, फिर मुंह से छोड़ें, फिर नाक से लें और ऐसे ओऽऽऽऽऽ की आवाज करते–करते सो जाएं।

इससे निद्रा गहरी और स्वप्नहीन हो जाएगी तथा सुबह उठने पर एक अपूर्व ताजगी का अनुभव होगा।

परमगुरु ओशो के अमृत वचनों पर समापन

साधना में धैर्य

साधना के जीवन में धैर्य सबसे बड़ी बात है। बीज को बो कर कितनी प्रतीक्षा करनी होती है?... पहले तो श्रम व्यर्थ ही गया दिखता है। कुछ भी परिणाम आता हुआ प्रतीत नहीं होता। पर एक दिन प्रतीक्षा प्राप्ति में बदलती है। बीज फटकर पौधे के रूप में भूमि के बाहर आ जाता है। पर स्मरण रहे, जब कोई परिणाम नहीं दिख रहा था, तब भी भूमि के नीचे विकास हो रहा था। ठीक ऐसा ही साधक का जीवन है। जब कुछ भी नहीं दिख रहा होता, तब भी बहुत कुछ होता है। सच तो यह है कि जीवन–शक्ति के समस्त विकास अदृश्य और अज्ञात होते हैं। विकास नहीं, केवल परिणाम दिखाई पड़ते हैं। साध्य की चिंता छोड़कर साधना करते चलें, फिर साध्य तो अपने आप आता चला जाता है। एक दिन आश्चर्य से भरकर ही देखना होता है कि यह क्या हो गया है! मैं क्या था और क्या हो गया हूं! तब जो मिलता है उसके समक्ष उसे पाने के लिए किया गया श्रम ना–कुछ मालूम होता है।

ध्यान में पूरा डूबना ही फल का जन्म है

जल्दी न करें। धैर्य रखें। धैर्य ध्यान के लिए खाद है। ध्यान को संभालते रहें। फल आएगा ही। आता ही है। लेकिन फल के लिए चिंतित न हों। क्योंकि वैसी चिंता ही फल के आने में बाधा बन जाती है। क्योंकि वैसी चिंता ही ध्यान से ध्यान को बंटा लेती है। ध्यान (मेडीटेशन) पूरा ध्यान (अटेन्शन) मांगता है। बंटाव नहीं चलेगा। आंशिकता नहीं चलेगी। ध्यान तुम्हारी समग्रता (टोटैलिटी) के बिना संभव नहीं है। इसलिए, ध्यान के कर्म पर ही लगो और ध्यान के फल को प्रभु पर छोड़ो ...और फल आ जाता है। क्योंकि ध्यान में पूरा डूबना ही फल का जन्म है।

अनुभूति में बुद्धि के प्रयास बाधक

ध्यान तेरा रोज गहरा हो रहा है, यह जानकर अति आनंदित हूं। बहुत से अनुभव होंगे– लेकिन उन्हें बुद्धि से समझने के प्रयास में मत पड़ना। बुद्धि के प्रयास बाधा बन जाते हैं। और न ही, कोई अनुभव पुनरुक्त हो, ऐसी वासना ही करना। क्योंकि, ऐसी वासना भी बाधा बन जाती है। जो हो उसके लिए बस प्रभु को धन्यवाद देकर आगे बढ़ जाना है।

कुछ भी ध्यान बन सकता है

यहीं राज है : अ–यंत्रवत् होना। यदि तुम अपने कृत्यों को अ–यंत्रवत् कर सके, तो पूरा जीवन एक ध्यान बन जाता है। फिर कोई भी छोटा–मोटा काम जैसे नहाना, भोजन करना, मित्र से बात करना– ध्यान बन जाता है। ध्यान एक गुण है; उसे किसी भी चीज में लाया जा सकता है। वह कोई विशेष कृत्य नहीं है। लोग इसी प्रकार सोचते हैं, वे सोचते हैं ध्यान कोई विशेष कृत्य है– कि जब तुम पूर्व की ओर मुंह करके बैठो, कुछ मंत्र दोहराओ, थोड़ा धूपबत्ती जलाओ, कि किसी निश्चित समय पर, निश्चित तरह से, निश्चित मुद्रा में कुछ करो। ध्यान का उस सबसे कुछ लेना–देना नहीं है। वे सब तुम्हें यंत्रवत् करने के उपाय हैं और ध्यान यंत्रवत् होने के विपरीत है। तो यदि तुम सजग रह सको, तो कोई भी कृत्य ध्यान है, कोई भी कृत्य तुम्हें अपूर्व रूप से सहयोगी होगा।

ध्यान है भीतर झांकना

बीज को स्वयं की संभावनाओं का कोई भी पता नहीं होता है। ऐसा ही मनुष्य भी है। उसे भी पता नहीं है कि वह क्या है– क्या हो सकता है। लेकिन, बीज शायद स्वयं के भीतर झांक भी नहीं सकता है। पर मनुष्य तो झांक सकता है। यह झांकना ही ध्यान है। स्वयं के पूर्ण सत्य को 'अभी और यहीं', 'हियर एंड नाउ' जानना ही ध्यान है। ध्यान में उतरें– गहरे ...और गहरे। गहराई के दर्पण में संभावनाओं का पूर्ण प्रतिफलन उपलब्ध हो जाता है। और जो हो सकता है, वह होना शुरू हो जाता है। जो संभव है, उसकी प्रतीति ही उसे वास्तविक बनाने लगती है। बीज जैसे ही संभावनाओं के स्वप्नों से आंदोलित होता है, वैसे ही अंकुरित होने लगता है। शक्ति, समय और संकल्प– सभी ध्यान को समर्पित कर दें। क्योंकि ध्यान ही वह द्वार है जो कि स्वयं को ही स्वयं से परिचित कराता है।

समष्टि को बांट दिया गया ध्यान ही समाधि बन जाता है

ध्यान के बाद प्रार्थना किया करो कि ध्यान में मिली शांति और आनंद सब ओर बिखर जाए– सबको मिल जाए। ध्यान करना है तुझे, लेकिन फल समष्टि को बांट देना है। तभी ध्यान समाधि बनता है।

अनुक्रमांक